❁ श्री जानकीवल्लभो विजयतेतराम् ❁

रसिकसम्राट् श्रीअग्रदेवस्वामी विरचित

श्रीसीतारामध्यानमञ्जरी

की

मकरन्दमाधुरीटीका

टीकाकार

सखेन्द्र श्रीरसरंगमणिजी महाराज

प्रकाशक

शान्ति जन कल्याण ट्रस्ट, कलकत्ता

प्राप्ति स्थान

श्री शत्रुहन शरणजी महाराज

श्री रस मोद कुंज

श्री अयोध्या

धर्मसंघ शिक्षा मण्डल

दुर्गाकुण्ड, वाराणसी

❀ श्री जानकीवल्लभो विजयतेतराम् ❀

रसिकसम्राट् श्रीअग्रदेवस्वामी विरचित

श्रीसीतारामध्यानमञ्जरी

की

मकरन्दमाधुरीटीका

टीकाकार

सखेन्द्र श्रीरसरंगमणिजी महाराज

प्रकाशक

शान्ति जन कल्याण ट्रस्ट, कलकत्ता

द्वितीय संस्करण २००० प्रति

मूल्य प्रेमपाठ

श्री जानकी जानिर्जयति

❀ भूमिका ❀

श्री सीतारामीय मधुर उपासना अनादिसिद्ध है। श्री सदाशिव-संहिता के कथनानुसार वेदों ने श्री शेषभगवान् से इस उज्ज्वल उपासना का उपदेश प्राप्त किया है। श्री शिवसंहिता एवं श्री हनुमत्संहिता कहती है कि महामुनि श्री अगस्त्यजी ने श्री हनुमत्-लालजी से मधुर उपासना की विशेष शिक्षा प्राप्त की है। श्री भुसुण्डिरामायण का कथन है कि लोकपिता श्री ब्रह्माजी ने श्री भुसुण्डि भगत को श्री सीतारामीय मधुर उपासना सिखाई है। अनादि आर्ष ग्रन्थ श्री बृहद् रामायण के कौशलखंड में भगवान् व्यासदेव के मुखश्रुत श्री सीताराम रासकथा श्री सूतजी ने शौन-कादि महर्षियों को सुनाई है।

वर्तमान युग के आलवार आचार्यों में श्री शठकोप स्वामी की सहर्षगीति एवं श्री रंगनायिकीजी का श्री रंगदेवजी के साथ विधिवत् विवाह भी इसी मधुर उपासना का साक्ष्य है।

हमारे पूर्वाचार्यों में भगवान् रामानन्द स्वामी का 'वैष्णव मताब्ज भास्कर', श्री अनन्तानन्द स्वामी की 'श्रीहरिभक्ति सिन्धु की वेला' भी श्री सम्प्रदाय के पूर्वकाल ही से श्री सीतारामीय मधुर उपासना का डिमडिम घोष करती आ रही है।

किन्तु श्री अग्रदेवाचार्य के पूर्व इस रसराजमयी श्री सीतारामीय उपासना की धारा अन्तःसलिला फल्गुगंगा की भाँति लोकदृष्टि से गुप्त थी और थी त्रिवेणी से मिलनेवाली श्री सरस्वती धारा के समान अलक्ष। इस उपासना का व्यापक रूप से व्यक्त प्रचार करने का श्रेय रसिकाचार्यचरण श्री अग्रदेव स्वामी को है।

हमारे वैष्णव समाज में प्रचलित बावन द्वाराओं में जहाँ एक-एक द्वाराचार्य के संस्थापित एक एक द्वारा गद्दी प्रसिद्ध है, वहाँ

अकेले श्री अग्राचार्यजी ने अपने शिष्यों और प्रशिष्यों के द्वारा तेरह द्वारापीठों की प्रतिष्ठा करवाई है।

आप श्री मैथिली सखी सर्वेश्वरी श्रीमती चन्द्रकलाजी के ही अवतारभूत[1] महान रसिकाचार्य हैं, तो आपके युगान्तर उपस्थित करनेवाले क्रान्तिकारी विस्मयदाय प्रचारात्मक प्रभाव देखकर कोई आश्चर्य नहीं होता।

प्रस्तुत प्रकाशन का मूल ग्रन्थ श्रीसीतारामध्यानमंजरी, इन्हीं महान् प्रभावशाली विशिष्ट रसिकाचार्य की अमर कृति है। सम्प्रदाय में यह ध्यान मंजरी आशीर्वादी पुस्तिका मानी जाती है। इसके पठन-मनन से इसमें वर्णित ध्येय देश काल समाज सब श्रद्धालु पाठकों के ध्यानदेश में प्रत्यक्ष हो जाते हैं।

हमारे पूर्वाचार्यों में श्री स्वामी शंकरदासजी महाराज ने अपने पुत्र एवं शिष्य श्री स्वामी जीवारामजी महाराज से कुछ ऐसा ही कहा भी है—

"यही पद गाय ध्यान मंजरी मंगाय,
कही माथै पधराय सियाराम हितकारी है।
याको देस काल पढ़ते ही हिये भाखै तोहि
आसिषा को फल थोरे काल ही में पाई है।[2]

यही कारण है कि हम लोगों के देखते-देखते इस समाजपूज्य ग्रन्थरत्न के मूल, पाद टिप्पणी सहित तथा सरलार्थपूर्ण कई संस्करण विभिन्न प्रकाशन स्थलों से अब तक प्रकाशित हो चुके, फिर भी इसकी माँग वर्तमान भक्त समाज में उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है। समाज में इनकी लोकप्रियता स्पष्ट है।

हमारे भावमस्त रंगीले रसिक समाज में तो यह परमादरणीय ग्रन्थरत्न सदा से ही कंठहार बन कर रहते आये हैं। आज भी बहुत से महानुभावों को यह सम्पूर्ण लघु कलेवर ग्रंथ मुखाग्र हैं तथा इनके नित्य पाठ से वे ध्यान साधन में अत्यधिक सफल श्रम हुए भी हैं।

---

१. देखिये श्री सीताराम रसचन्द्रोदय का आद्य मंगलाचरण एवं श्री रसिक प्रकाश भक्तमाल का छप्पय १५।

२. वही कवित्त १०, ११।

प्रस्तुत प्रकाश्य मूल ग्रन्थ के यशस्वी टीकाकार हैं श्री सख्यरस के भावावेशी सिद्ध सन्त प्रातः स्मरणीय श्री रसरंगमणिजी महाराज। आपके द्वारा रचित मर्मस्पर्शी मधुर भावपूर्ण पदों को कुशल गायकों के मुख से सुनकर आज भी उत्सव समाजों के जुटे हुए सज्जन भाव में छक जाते हैं। टीकाकार ने अपनी स्तुत्य टीका का नाम रखा है मकरन्द माधुरी। यथा नाम तथा गुण! आप टीका पढ़ें तो आपका हृदय इसके सुरभित भावों से आमोदित हो ही उठेगा।

श्री 'मणि' जी महाराज जैसे वेदान्तदर्शन के प्रकाण्ड पंडित थे वैसे ही थे भावदेश के अन्तःस्थल में पहुँचे हुए अनुभवशील प्रतिष्ठित सिद्ध। जैसा मूलग्रंथ वैसी ही इनकी मकरन्द माधुरी टीका। मणि-कांचन योग है कि खांड मिश्रित क्षीर।

टीका की भाषा है अवधी। ध्येय मिष्ट इष्ट श्री अवधबिहारी की मातृभाषा अवधी में टीका अधिक रसनीय हो गई है।

कई सज्जनों ने हमें राय दी कि आप टीका की अवधी भाषा को वर्तमान पठित समाज के लिए सुबोध हितार्थ हिन्दी की प्रचलित खड़ी बोली में रूपान्तरित कर दें या किसी विद्वान् को ऐसा कर लेने की अनुमति ही दे दें। परन्तु हमें भय हुआ कि महाराज श्री रसरंगमणिजी के प्रेमपंकिल हृदय से जिस रूप से टीका की समाधि भाषा निस्सरित हुई है, उसका ओज रूपान्तर भाषा में सुरक्षित नहीं रह पायगा। अतः प्रकाशक से हमने आग्रह किया कि आप पूज्य टीकाकार की मौलिक वाणी को अविकल रूप ही प्रकाशित करें। हुआ भी वही।

सहृदय पाठकों से आग्रह है कि आप टीका सहित इस ध्यान ग्रन्थ का अध्ययन मनन करते रहें, आपका ध्यान साधन सिद्ध हो कर ही रहेगा। अटल विश्वास है हमारा।

कलकत्ता के धनीमानी सज्जन श्री पुरुषोत्तमलाल जी धानुका के उदार द्रव्य दान से यह भक्त समाज के लिए महान् उपयोगी ग्रन्थरत्न प्रकाश में आ रहा है। उपकृत समाज का कृतज्ञ हृदय प्रकाशक के लिए स्वतः मंगलानुशासन करेगा। हम अधिक क्या कहें?

वाराणसी के विद्वान् सज्जन श्री राधेश्यामजी खेमका के द्वारा प्रकाशन एवं सम्पादन आदि सम्बन्धी अशेष कार्य सम्पन्न हुए हैं आप भी धन्यवाद के पात्र हैं।

—प्रस्तुत ग्रन्थ के पठन-पाठन, प्रचार-प्रसार से समाज लाभान्वित हो, ऐसी मंगलकामना रखनेवाला

रसिक महानुभावों का लघु अनुचर :—

विनीत—शत्रुहनशरण

श्रीरसमोदकुंज, श्री अयोध्या

॥ श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥

॥ श्रीमते हनुमते नमः ॥

दोहा—(टीकाकारकृत मंगलाचरण)

श्री सम्प्रदा सुदीप श्री, रामानन्दहि ध्याय ।
अग्र कीन्ह पद परसि निज, गुरु चरनन सिर नाय ॥
आसिरवादी राम सिय, ध्यान मंजरी मंजु ।
तासु तिलक हनुमत कृपा, लिखौं ललित सुखपुंज ॥

॥मूल॥ (मङ्गलाचरण मूलग्रंथकार श्रीअग्रदेवकृत)

सुमिरौं श्री रघुवीर धीर रघुवंस विभूषन ।
सरन गहे सुख रासि हरत अघसागर दूषन ॥१॥
सुन्दर राम उदार बान कर सारँगधारी ।
हिय धरि प्रभु को ध्यान विदुष जन आनँदकारी ॥२॥

॥ तिलक वार्तिक ॥

आदि में मङ्गलाचरण रूप सर्वाङ्ग ध्यान सुमिरि कै, निज मनोरथ के अनुकूल नाम, गुण, प्रभाव संक्षेप ते कहिकै, पुनि अनन्त भुवनाधार, अनंत दिव्य गुणागार, निर्गुण निराकार, सच्चिदानन्द सार, रामरूप ध्यान की आधारशक्तिरूप श्री अवधपुरी को ध्यान कहैंगे ॥ श्री रामाय नमः । छन्द रोला । धीर रघुवंश विभूषण श्री रघुवीर को मैं सुमिरण करत हौं । कैसे हैं कि शरण गहे ते सुखराशि हैं, अरु अघसागर तथा दूषण का सागर हरते हैं । यह अन्वय है ।

अब भाव कहते हैं । श्री नाम शोभा सम्पत्ति की खानि, आदिशक्ति, पराभक्ति, श्री रामानन्दकारिणी श्री सीता स्वामिनी सहित रघुवीर धीर रघुवंश विभूषण को मैं सुमिरत हौं ।

तहाँ श्री सहित कहे, ताको भाव यह है कि हमारी श्री सम्प्रदाय है अरु यह ध्यान श्री जी का धन है; ताते उनहीं की कृपा ते मिलैगा । पुनि श्री रघुवीर यह एक ही नाम कहे, युगल नाम प्रगट, न कहे, ताको हेतु यह है कि श्री सीताराम एक ही तत्त्व हैं, केवल भक्तजनानन्द हित युगल हैं । यथा—

दो०—गिरा अर्थ जल बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।
वन्दौं सीताराम पद, जिनहिं परम प्रिय खिन्न ॥

अरु रघुवीर शब्द ते सर्व विघ्नविनाशक, शरणागत-रक्षण समर्थ, किशोर रूप

श्री राम को ध्यान जनाये, और धीर कहने को भाव यह है कि धीरता विना ध्यान धारण नहीं होय, सो निज धीरता का लवलेस देवैंगे। अरु रघुवंस विभूषन पद ते राजमाधुरी धुरीनता जनाये। कैसे हैं रघुवंस विभूषण कि शरण गहे सुखराशि हैं। अर्थात् शरण नाम रक्षक जानि जो कोई उनके चरणों को गहै, नाम तन, मन, वचन ते आश्रित होय; ताको सुख राशि हैं, अर्थात् सव दुख भय छोड़ाय कै, अभय सुख राशि देते हैं। अरु समुद्र सम अथाह अपार अघ अर्थात् अनेकन जन्मन के संचित पाप रूप दुःकर्म अरु दूषण जे प्रारब्ध रूप दुर्गुण समुद्र सम डुवाने हारे ते दोऊ हरि लेते हैं। अरु सुख राशि नाम स्वस्वरूप निज स्वरूप को ज्ञान दिये, तव क्रियमान कर्म नहीं लागते ताते शरणागत जन अभय मोक्ष को पावते हैं। इति तात्पर्य भावार्थः ॥१॥

अव दूसरे पद में परमतत्त्व सकल रसराशि विदुष उपास्य आनन्दमयत्व कहते हैं।

सुन्दर अर्थात् नख ते शिख लगि सर्वाङ्ग महापुरुषलक्षणलक्षित, मुनिमनमोहन, श्रृंगार रसमय रूप हैं, ऐसे सुन्दर श्रीराम अर्थात् श्रीजानकी जी के विषे रमणहारे अरु रमावनहारे तथा मुनिजनमनरमण रमावण हारे, पुनि अन्तर्यामी रूप चराचर में रमणहारे। उदार अर्थात् अपने चिद्रूप की सत्ता सबको देनहारे अरु तिनकी रक्षा हेतु युगल कर में वाण सारङ्ग चाप धारणहारे अरु विदुष, जे सारासार के ज्ञाता, तिनके आनन्दकरन हारे; ऐसे प्रभु नाम अघटितघटनाकारी धनुर्धारी को ध्यान हिय में धरि कै सुमिरौं, नाम चिन्तवन करत हौं।

यह पूर्वपद की क्रिया यहाँ लागती है। सुन्दर पद ते अनन्त शुभगुण पूर्णता अरु राम पद ते निर्गुण-सगुण निराकार साकार सर्व परत्वपूर्ण, विचित्र विग्रह की अखंडता जनाये। उदार पद ते अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, भक्ति अपनपौ लगि की प्रदानता औ बाण सारंगधारी में सर्वायुधों में धनुर्वाण की मुख्यता अरु दोई आयुध कहने से द्विभुजत्व की अनादि सिद्धता जनाये।

अरु विदुष जन आनन्दकारी को भाव यह है कि मैं अविदुष हौं; ताते हिय में ध्यान धरत हौं, कि मोको भी विदुष बनाय कै, आनन्दित करैंगे। अरु हिय में प्रथम ध्यान धरि कै सुमिरत हौं, जाते नित्य धाम को ध्यान मन वाणी में साक्षात्कार होय, तब वर्णन करौं। इति भावार्थः ॥२॥

॥ मूल ॥

अवधपुरी निज धाम परम अति सुन्दर राजै।
हाटक मनिमय सदन नगन की कान्ति विराजै ॥३॥

॥ अर्थ पूर्व प्रसङ्ग ॥

आदि में चारि चरण ते ध्यानमय मङ्गलाचरण करि कै, अव श्री सीताराम ध्यान-मञ्जरी आरम्भ करते हैं।

तहाँ ध्यान मञ्जरी का रूपक अर्थ यह है कि श्री सीतारामध्यानरूप कल्पवृक्षावलम्वित जो वेलि सम बुद्धि, ताकी वाणीरूपा मञ्जरी है। ताकी टीका मकरन्द माधुरी है। तहाँ श्रीराम के नाम, रूप, लीला, धाम ये चारो सच्चिदानन्दमयी नित्य हैं, अरु परस्पर एक-एक की नित्यता प्रतिपादन करि रहे हैं।

यथा श्रुतिः—"तस्य नाम महद्यशः" यह श्वेताश्वतरोपनिषत् की श्रुति कहती है कि तिन महायशस्वी का नाम है। तब तीनों आपही सिद्ध है। नाम है तो रूप अवश्य है और रूप है तो रूपकृत लीला विहार अवश्य है। अरु लीला विहार है तो ताको आधार धाम अवश्य है। सो प्रथम श्री रामरूप ध्यान की आधारभूता सिद्धिपीठरूपा अवधिपुरी का वर्णन करते हैं।

॥ अर्थ ॥

"अवधिपुरी निज परम धाम अति सुन्दर राजै है।" अवधिपुरी के युगल रूप प्रसिद्ध हैं। एक नित्य, दूसरा नैमित्तिक। अरु, दोऊ नित्य नैमित्तिक मिलित भक्त मानसिक भावनामय अवधि को तीसरा रूप है।

तैसेहीं श्री अवधिविहारी के भी त्रिधा रूप हैं। पै तीनों एक ही हैं; औ तीनो नित्य हैं। तहाँ पर अयोध्या प्रमाणसिद्ध हैं। अरु यह भूमि में लीला अयोध्या प्रत्यक्ष सिद्ध है। तथा भावनामयी प्रमाण प्रत्यक्ष मिलित अनुमान सिद्ध है। ऐसी परम प्रसिद्ध अवधिपुरी निजपुरी है।

निजपुरी कहिवे को भाव यह है कि छवो श्रीराम की पुरीं हैं। अरु अवधि निज पुरी हैं अर्थात् जैसे देस, ग्राम, पुर सब राजाही के हैं; परन्तु राजमहल मुख्य निज हैं; तैसे ही श्री रामचन्द्रजी की और सब पुरी देस ग्राम सम है, अरु श्री अवधि निज राजमहल इव है। सो श्री अवधिपुरी निज है। अरु परम धाम ही है। अर्थात् अवध ते प्रिय कोई धाम नहीं है। यथा

चौपाई:—"यद्यपि सब बैकुंठ बखाला। वेद पुरान विदित जग जाना॥
अवधि सरिस प्रिय मोहि न सोऊ। यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ॥"
—इति मानस रामायणे

कोउ कोउ नाम विरले राज माधुरी रसिक उपासक जिन को यह अवधि अति प्रिय है, ते जानते हैं।

सो श्री अवधि अति सुन्दर राजै है। अति सुन्दर की पुरो है, ताते अति सुन्दरि है औ राजै है नाम तेजोमय है। अरु श्रीवाल्मीकि में वर्णन है, बारह कोश चौड़ी अरतालिस कोश लम्बी है। कैसी अति सुन्दरि राजै है, सो संयुक्ति संक्षेप रीति ते कहते हैं कि जामें संग ही पुरी राजभवन दोऊ को वर्णन ह्वै जाय। हाटक नाम सुवर्ण अरु मणिमय सदन बने हैं। अरु तिन भवनन में नगन की कान्ति विराजती है,

अर्थात् साधारण मणि सुवर्ण के सब गृह बने हैं, परन्तु आगे की ओर अरु द्वारि झरोखा कंगूरा कलसान में नग महामोल के रतन लगे हैं, तिनकी कान्ति शोभा विशेष राजै है नाम प्रकाशै है ॥ ३ ॥

॥ मूल ॥

पौंरि द्वार अति चारु सुहावन चित्रित सोहै।
चंपतार-मन्दार-कल्पतरु देखत मोहै ॥ ४ ॥

॥ अर्थ ॥

अरु पौरि के द्वार अति चारु हैं। सोहावन चित्रौ ते चित्रित सोहते हैं। अर्थात् पौंरि द्वार नाम प्रथम के द्वार, सिंहपौरि दरवज्जा सो अति चारु कहे सुन्दर है, जामें मूंगा की महरावदार अति ऊँची चौकठ लगी है। हीरन ते जटित हेम के कपाट लगे हैं। दोऊ दिशि मणीन के हाथी बने हैं। ऊपर दो सिंह शोभित हैं। इत्यादि अति सुन्दर रचना ते रचित हैं। औ सोहावन जो चित्र हैं, गऊवत्स, ब्राह्मण, बालक, कलस-जुत नारी, कन्या कुमारी, अप्सरा, सूर्य्य-चन्द्रादि देवता, फूले-फले देववृक्ष, तिनपर हंस मयूरादि पक्षी, मंगलमय भगवत् अवतार इत्यादि नयनमनहारी विचित्र चित्रों ते चित्रित हैं, ताते अतिशय सोहै हैं।

ते चित्र दो प्रकार के है। कोई सुवर्ण, मणि, मोती, मूंगान ते जटित हैं, कोई केवल रंगन के हैं। ऐसो राजद्वार सोहै है, तैसही सब के द्वार सोहते हैं। अरु द्वार के आगे अति विशाल चौक सोहती है। तहां चंपतार मंदार आदि कल्पवृक्ष लगे हैं। पांति की पांति, ते देखत संते मन मोहि लेते हैं। चंपतार कोई वृक्ष है। इस काल प्रसिद्ध नहीं है। किन्तु चंपै को चंपतार कोई देश में कहते हैं। अथवा चंप कहे चंपातार नाम तरकुल। रकार लकार की सवर्णता मानि ताल को तार मंदार के जमक हेतु कहे हैं।

मंदार कल्पवृक्ष देववृक्ष हैं। ते तेहिकाल प्रत्यक्ष, अब ध्यान में मानसी नेत्रन ते देखत संत मन मोहि लेते हैं ॥४॥

॥ मूल ॥

भवन भवन चित्राम चित्र की रम्भा सोहैं।
वनज सुतन की पाँति कान्ति गोखन मग जोहैं ॥५॥

प्रसङ्ग—यहि प्रकार चौक को ध्यान कहि कै अब और ध्यान कहते हैं।

भवन-भवन कहे राजमहल के भवन तथा पुरी भरे के भवनों में रंगन के अरु रतनन के चित्राम हैं, सो श्री रामायण में भी वर्णन है—

दोहा—"चारु चित्रसाला गृह, गृह प्रति लिखे बनाय।
रामचरित जे निरख मुनि, ते मन लेहिं चोराय ॥"

रामचरित अर्थात् चारो रघुनन्दन लालन के जन्म के, बाल लीलान के, व्रत बन्धन के, वेद पढ़ने के, ताड़का सुवाहु हनन, यज्ञ रक्षन के, श्री सिया स्वयम्बर धनुभंग के, चारो भ्रातन के विवाहन के, श्री अवध आगमन परिछन आदि के, षटऋतु विहारन के, इत्यादि चित्राम ज्यों के त्यों बने हैं कि भ्रम ते तद्रूप मानि मुनीन के मन मोहि जाते हैं।

अरु चित्र की रंभा नाम केरा भवनों के भीत पर अरु द्वारदेश में शोभित हैं। ते भीतों पर रंगौं ते रची हैं। और द्वारन में सुवर्ण के पेड़, हरित मणिन के पत्र, अरुण मणिन के फूल औ हरितै कै फल, कोई पके फल पीत मणिन के सोहै हैं।

(वनज) अरु वन जे जल, ताते ज नाम उत्पन्न जो सीप, तिन के सुत मोती, तिन के पांतिन की कांति गोखन में है। तिन गोखन के मग ते मानो भवन जोहै (नाम देखते हैं)। अर्थात् भवनों में नीलादिक मणिन के गोखा झरोखा रचे हैं। तिन में मोतिन की झालर आदि पाँति की पाँति कान्ति जुत लगी हैं। ते गोखा झरोखा मानो भवन के नेत्र हैं। तिन नेत्रन के मग ते, जनु भवन सपरिकर श्री सीताराम जी को जोहै नाम देखि रहे हैं।

अथवा तिन गोखन को ध्याता ध्यान नेत्रों ते जोहै।
गोक्षा गवाक्ष शब्द को अपभ्रंश गोखा है ॥५॥

॥ मूल ॥

तोरण केतु पताक ध्वजा तहँ विमल सुहाई।
मनु रघुवर हित करन आय त्रिभुवन छवि छाई ॥६॥

अर्थ—तोरण नाम बन्दनवार तथा द्वारन के आगे उपद्वार। खंभ महराब आदि रचना रचित वाहर के द्वार को भी तोरण कहते हैं। ते सोहते हैं। अरु केतु जे मध्य प्रमाण के हैं, अरु तिन ते छोटी पताका है अरु दोहून ते बड़ी ध्वजा है। तहाँ तिन भवनन पर अर्थात् अग्रभाग द्वारन में यथायोग्य वन्दनवारैं अरु शृङ्गन कंगूरन में यथायोग्य केतु पताका औ मुख्य महलन गोपुरन पर ध्वजा, तिन में कंचन मणि रचित फूले, कचनार के वृक्षन के विचित्र चित्र सोहते हैं। ते विमल सोने के मणिन जटित दंडन सहित सोहाई हैं।

तिनकी कवि उत्प्रेक्षा करते हैं कि मानो श्री रघुवर के हित करने के हेतु त्रिभुवन स्वर्ग, मर्त्य, पाताल की छवि केतु पताकन के रूप धरि कै अवध भवन पर आय कै छाय रही है। भाव यह है कि तीनो भुवन की छवि को सतावन हारे रावण के मारिबे को त्रिभुवन नाथ अवध में अवतरित भये। तब तीनों भुवन की छवि मानो सेवा हित विचारि अवध में आय कै छाई है कि श्री रघुवर को अवध अति प्रिय है, ताते अति हित मानेंगे ॥६॥

॥ मूल ॥

वीथी वगर बजार रतन खँचि जोति उजासा ।
रहन न पावै तिमिर सहज ही होत प्रकासा ॥६॥

अर्थ :—अरु वीथी कहे गली, औ वगर तिन गलिन के टोला मोहल्ला; अरु बजार चौक चौहट्टा रचित राजमार्ग, ते सब नव रतन ते खचित नाम जड़ित हैं। ते रतन निज जोति ते उजासा नाम उजियार करि रहे हैं। ताते कृष्ण पक्ष की राति में भी तिमिर नाम अंधियार नहीं रहने पावै हैं। दोऊ पक्ष में सहज ही विन दीप के प्रकाश होत है।

यथा श्री रामायणे

॥ चौपाई ॥

"बहु मनि रचित झरोखा भ्राजें। गृह गृह प्रति मनि दीप विराजैं" ॥७॥

॥ मूल ॥

देखि पुरी छवि भरा मध्य के अँटकत रथ रवि।
हरषहिं वरषहिं सुमन विबुध जन निरखि पुरी छवि ॥८॥

प्रसंग :—यहि प्रकार चार पद ते राजभवन, पुरभवन, वजार आदि को ध्यान कहिकै, अब तिनकी अति छवि कहते हैं।

अर्थ :—ऐसी अतिशय छवि ते भरी श्री अवधिपुरी देखि कै मध्य के नाम मध्य दिवस के रवि को रथ अटकत है। तात्पर्य यह है कि मध्य दिवस के समय श्री दिनेश जी अवध के सामने होते हैं, तव छविभरी पुरी देखि अरु निजकुलकुमुदकलानिधि श्री कौशल किशोर के केलिथली लखि, अश्व सारथी सहित आनन्दित खड़े रहि जाते हैं। पुनि मन्द-मन्द चलते हैं, सो श्री गोस्वामी जी भी कहे हैं।

पद

देखत अवध को आनन्द।
हरषि वरषत सुमन दिन दिन देवतन के वृन्द ॥
मध्य दिवस विलंवि चलत दिनेस उडगन चन्द ॥ इत्यादि

—श्री गीतावली २३ (पूरा पद परिशिष्ट में)

तैसही श्री रघुवर छैल छवीले की पुरी की छवि निरखि कै विबुध, विधि इन्द्रादि देवता अति हरषते हैं। अरु कल्पतरु के सुचि सुगन्धित सुमन वरषते हैं अर्थात् श्री अवध विलासी अवध निवासिन युत अवध को सुमनो ते पूजते हैं ॥८॥

॥ मूल ॥

श्री रघुवर जस भरी पुरीवर वर की दायम।
धर्मसील नर नारि सबै प्रभु सुजस परायन ॥९॥

अर्थ :—श्री रघुवर यश ते भरी पुरी वर वर की दायिनी है। श्री कहे शोभा अरु श्री जानकी जी। तिनते सहित रघुवर को जस नाम प्रबल प्रताप की कीरति अर्थात् ताड़कादि संहार, श्री विश्वामित्र मख रक्षन, शम्भु धनु-भंजन, श्री जनकमनरंजन, जगतविजयी परसुधर गर्वगंजन, श्री विदेहनन्दिही विवाहन, पुनि श्री अवध में आय कै प्रजन को सप्रेम प्रिय हित उमाहन, पुरकार्य करनो, इत्यादि श्री रामायण कथित श्री रघुवर यश ते पुरी भरि रही है। अर्थात् बालक, युवा, वृद्ध नरनारिन के मन में श्री रामगुणयश भरि कै समाते नहीं। सो वचन मिसु कहते हैं। ताते दिन रात कहते हैं, सुनते हैं, गावते हैं, अनुमोदन करते हैं। ऐसी श्री रघुवर यश भरी पुरी है। यह गुण कहि कै पुनि महत्व कहते हैं ॥१०॥

पुरी वर वर की दायिनी है। वरश्रेष्ठ वरदान अर्थात् अर्थ, धर्म, कामादि तथा श्री राम प्रेम भक्ति, अन्त में मुक्ति अर्थात् निज नित्य रूप से धाम में निवास। यथा श्री रामायणे :—

चौपाई— "रामधामदा पुरी सुहावनि। लोक समस्त विदित जग पावनि ॥
चारि खानि जग जीव अपारा। अवध तजे तन नहिं संसारा ॥
सब विधि पुरी मनोहर जानी। सकल सिद्धिप्रद मंगल खानी ॥

पाठ में 'दायन' है, सो परायन के अनुप्रास हेतु है। परन्तु अर्थ में दायिनी कहना काव्य की ऐसी रीति प्रसिद्ध है।

अब यश भरी को भाव देखावते हैं। धर्मशील नरनारि हैं, सो धर्म में दो प्रकार हैं। एक वर्णाश्रम धर्म, दूसरा विशेषभगवतधर्म। तिन दोनों धर्म में शील कहे स्वभाव हैं सब नरनारिन को अर्थात् सब नर एकनारि निरत हैं अरु नारि सब पतिव्रता हैं।

तथा विशेषभगवत धर्म्म श्री रामप्रद प्रीति सो स्वाभाविक है। याही ते सब प्रभु श्री सीताराम के सुयश में परायण तत्पर हैं। सोई आगे कहते हैं :—

॥ मूल ॥

गावत रघुवर चरित मिलत जित तित ते भामिनि।
स्वर अस कोकिल नाद रूप जनु दमकत दामिनि ॥१०॥

अर्थ—श्री रघुवर को चरित गावती भईं। भामिनी नाम नारि मिलती हैं। अर्थात् निज वृन्द सहित नारि श्री रामचरित गावती हैं। कोई श्री सरयू जी ते आवती है, कोई जाती है, बीच में मिलती हैं। ऐसेहीं राजमहल की दूसरी दूसरी राह ते गावती आवती हैं। राजमार्ग में मिल जाती हैं। अथवा ध्याता भाविक को भावनारूप में गावती नारि मिलती हैं।

ते हैं कैसो कि कोकिला के नाद नाम कुहुक ऐसा कंठस्वर है। और रूप की दुति तो जनु दामिनी दमकती है। औचक निहारे ते नैनन में चकचौंधी छाय जाती है। भाव यह है कि मानों आनन्द मेघ की पुरी में दुतिरूपा दामिनी निवसी है ॥१०॥

॥ मूल ॥

तिन जुवतिन को भाग वरनि का पै कहि आवै।
सचि सारद नगसुता देखि कै मन ललचावै ॥११॥

अर्थ—श्री अग्रदेव स्वामी कहते हैं कि तिन युवतिन को भाग वरणि के कापै कहि आवै। तिन कौन युवतिन को कि जिनको श्री सीताराम जी यथायोग्य निज नित्य-सम्बन्धिनी मानते हैं, दर्शन देते हैं, यथोचित सम्मान करते हैं। तिनको भाग को देखि अर्थात् जा समय श्री जनकनन्दिनी रघुनन्दन जी को लोचनन ते लखती हैं, ललित वचन सुनती हैं, विमल विनय सुनावती हैं, ता समय सुरेश की शची, विरंचि की शारदा शिव की नगसुता पार्वती देखि कै मन में ललचाती हैं कि अहो इन युवतिन सम हम न भईं ॥११॥

॥ मूल ॥

अवध पुरिन की अवधि यही श्रुतिसंमृति वरनी।
ध्यान धरे सुख करनि नाम उचरत अघ हरनी ॥

प्रसंग—यहि विधि पुरवासिन को भाग कहिकै, पुनि पुरी के प्रभाव कहते हैं।

अर्थ—अवधिपुरी सब पुरिन की अवधि नाम मर्यादा है। यही सिद्धान्त वार्त्ता श्रुति स्मृतिन ने वरनी है।

तहाँ कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीयशाखा की दो श्रुति प्रमाण :—

(१) अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या,
तस्यां हिरण्यमयः कोशः स्वर्गो लोको ज्योतिषावृतः ॥

(२) यो वै तां ब्रह्मणो वेद अमृतेनावृत्तां पुरीं तस्मै
ब्रह्म च ब्रह्मा च आयुः कीर्त्ति प्रजान् ददुः ॥

इत्यारण्यके भद्रयणे

॥ अथस्मृतिप्रमाण ॥

अयोध्या च परंब्रह्म सरयू सगुणः पुमान्।
तन्निवासी जगन्नाथः सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥१॥

"विष्णोः पादमवन्तिकां गुणवतीं मध्ये च काञ्चीपुरीम्।

नाभौ [illegible] तथा च हृदये मायापुरीं पुण्यदाम्।

ग्रीवामूलमुदाहरन्ति मथुरां नासाग्रवाराणसी-
मेतद् ब्रह्मपदं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरीं मस्तकम् ॥" ॥२॥

एवं सहस्रावधि श्रुति-स्मृति प्रमाण हैं। अर्थात् जैसे सब अंगों के ऊपर अवधि मस्तक है, तैसे सब पुरिन लोकन के ऊपर मस्तक सम श्री अवधपुरी है।

कवित्त—पुरुष के पायन अवंती गुणवंती लसै,
पुरी कांची कटि द्वारावति नाभी भ्राजती।
माया हृदय माहि कंठ मथुरा कहाहि कासी,
नासा अग्र पाहि छवौ छहूँ अंग छाजती।
एई ब्रह्मपद कहैं मुनि 'रसरंग' भनी,
सवन के सीस पर अवधि विराजती।
अवधि के सीस पर मुकुताभरण सम,
सरित सिरोमणो सरजु सोभा पावती।

यह कवित्त दूसरे श्लोक को अर्थ है।

अवधि तो सब ही पुरीन की अवधि है।

॥ कवित्त ॥

जोग की अवधि दिव्य-भोग की अवधि,
न वियोग याके मधि भवरोग अवषधि है।
ज्ञान की अवधि प्रभु ध्यान की अवधि,
दुखहान की अवधि देनि सुख को उदधि है ॥१॥
जस की अवधि भक्तिरस की अवधि,
रामवस की अवधि प्रेमघृत हेतु दधि है।
रामरूपा जानि बसि सेवै रसरंग मनि,
अवधि तो सब ही पुरीन की अवधि है ॥

अरु श्रुतिन को यह अर्थ है कि आठ चक्र नाम आवरण हैं जिसके, अरु नवद्वार हैं जिसके, ऐसी देवनाम प्रकाश रूप अर्थात् सच्चिदानन्द विग्रहवन्तौ की पुरी अयोध्या है। अर्थात् शरीरवत् भगवत्शक्ति रूपा है। तिस में हिरण्यमय तेजोमय कोश बने हैं, जिसको स्वयं स्वर्गलोक कहते हैं। ज्योतिनाम ब्रह्मप्रकाश करि के आवृत नाम वेष्टित हैं ॥१॥

जो पुरुष अमृत करि कै आवृत तिस ब्रह्म की पुरी को जानता है, तिस के वास्ते ब्रह्म कहे परब्रह्म ओ ब्रह्मा आयुर्बल, कीर्त्ति प्रजा देते हैं। यह पुरी के ज्ञान मात्र का फल है। अरु उपासना करने ते पुरी को वास मिलता है।

यह अर्थ परा अयोध्या को प्रतिपादक है। पुनि दूसरा अर्थ करते हैं।

सब पुरीन की अवधि नाम मर्यादा यही प्रत्यक्षरूपा अवधि है। यही अवधि श्रुति-स्मृति करि कै बरनी गई है कि सब पुरीन की अवधि है। अरु ध्यान धरे सुख करनी है। तथा नाम उच्चारत संतै अघहरनी है। तिन नामों की:—

॥ दोहा ॥

जयति अयोध्या कोसला, जय विमला साकेत।
जयति अवध अपराजिता, सत्या सरजु समेत॥

यामें धामी धाम के परत्व की एकता देखाई कि जैसे धामी श्री राम को ध्यान अखंड आनन्द दाता है, तैसे श्री अवधि को ध्यान सुखदाता है। अरु जैसे श्री राम के नाम उच्चारण ते अघहारी हैं, तैसे श्री अवधि के नाम उच्चारण ते अघहारी हैं। यामें दोनों की मोक्ष प्रदानता व्यंजित है, क्योंकि अत्यन्त दुःख की निवृत्ति अरु परम सुख की प्राप्ति को मोक्ष कहते हैं। सो नाम स्मरण से अघ अरु ताको फल दुःख इन दोहुन को नास करि कै ध्यान धरे ते सुख रूप मोक्ष की दाता है, ताते सब पुरिन की अवधि है ॥१२॥

॥ मूल ॥

करि करि बहुत कलेस कहत उपमा जो गुणि जन।
अन्य उक्ति सब अल्प अवधि सम अवधि भले बन ॥१३॥

प्रसङ्ग—अब श्री अवधि परत्व को पूर्ण करते हैं।

अर्थ—गुणी जन कहे कविजन, वहुत कलेस नाम बुद्धि दौराय कै, अनेकन कल्पना करि करि जो अवधि को उपमा और पुरिन की कहते हैं, सो अन्य उपमा की उक्ति नाम कहनि सब अल्प कम हैं। अर्थात् भली नहीं है। ताते थकि कै कहते हैं अवधि की सम अवधि हैं। यही उपमा भले बनै है, और नहीं बनै। यह अनन्योक्ति (अनन्वय) अलंकार है। यथा

॥ चौपाई ॥

"लही न कतहुँ हारि हिय मानी। इन सम यइ उपमा उर आनी॥"

ऐस ही श्री अवधि विन्दु ग्रन्थ में भी कहे हैं।

॥ पद ॥

श्री अवधपुरी की यह छवि पर मैं वारी।
ब्रह्म भवन वैकुंठहु का है का कैलास विकारी।
त्रिगुण तीन देवन की ते हैं या तो उन ते न्यारी॥
अर्थात् अवधि निरूपम है ॥१३॥ इत्यादि।

❀ यह श्री अवधविन्दु श्री काष्टजिह्वा स्वामी कृत ग्रन्थ दर्शनीय है।

—दीन शत्रुहनशरण

॥ मूल ॥

वापी कूप तडाग रतन सोपान बनाये ।
रहे अमल जल पूरि विकसि कल्हार जु छाये ॥१४॥

प्रसंग—इस ग्रन्थ में अवधि ऐसा ही पद है। अरु अन्य ग्रन्थों में अवध ऐसा पद है। तहाँ अर्थ में किंचित् भेद है।

अवधि नाम सब पुरिन की मर्यादा है अरु अवध नाम कालादिकों ते वध नहीं; परन्तु पुरी के संग अवधि औ पुर के संग अवध भलो भासै है। भाषा पद है ताते।

अर्थ—श्री अवध में ठौर-ठौर बावड़ी, कूप, तालाव हैं। तिनमें रतनन की सीढ़ी बनी है। अरु अति निर्मल जल ते पूरण हैं अरु कल्हार नाम सुगन्धित कमल (सौगन्धिकं तु कह्लारं अर्थात् रात में खिलने वाली कुई नामक श्वेत कमल) फूलि कै बावड़ी तालावन में छाइ रहे हैं ॥१४॥

॥ मूल ॥

सीतल तरु की छाँह विहँग कूजत मन भाये।
चहूँ ओर आराम लगत उपवन जु सुहाये ॥१५॥
तिन पर केकि कपोत कीर कोकिल किलकारत।
सुर धरि तिनकी देह मनो प्रभु सुजस उचारत ॥१६॥

अर्थ—तिन बाउड़ी तालाबन के तीरन में शीतल वृक्षन को छाया है। तिन वृक्षन पर बहुत रंग के विहंग रस-रंग मनभाये बोलि रहे हैं।

पुनि अवध के चारहूँ ओर आराम नाम बाग, उपवन, फुलवारी अर्थात् बारह वन, बारह उपवन मुख्य और लघु दीरघ अनेकन लगे हैं। ते अति शोभायमान लगते हैं ॥१५॥

तिन पर अर्थात् आरामों के वृक्षवृन्दों पर केकि (मोरी मोर) कपोत (कबूतरी) कीर (सुकी सुवा) औ कोकिला ते सब किलकारि रहे हैं। नाम सानन्द स्वर ते कुहुकि रहे हैं। ताकी उत्प्रेक्षा कहते हैं कि मानो तिन पक्षिन की देह धरि कै सुर इन्द्र ब्रह्मादिक प्रभु नाम समर्थदेवाधिदेव श्री रामचन्द्र जी को सुयश उचारि रहे हैं ॥१६॥

॥ मूल ॥

झूमि रहे लगि भार डार फल फूलन भारी।
पथिक जनन फल देन मनहुँ तिन भुजा पसारी ॥१७॥

प्रसंग—अब वृक्षन को बरनते हैं।

अर्थ—भारी वृक्षन की डारन में फल-फूलन के भार लगि कै झूमि रहे हैं। तिनकी उत्प्रेक्षायुत उपमा कहते हैं कि मानो तिन वृक्षन पंथ में चलने हारे पथिक जनन को

फल देने के हेतु निज डार रूपी भुजा पसार रहे हैं। यामें यह व्यंजित है कि ते वृक्ष कल्प वृक्षों से भी अधिक उदार हैं। ताते बिन माँगे ही देवे को हाथ पसारे हैं ॥१७॥

॥ मूल ॥

निकटहिं सरजू सरित धरे अस उज्जल धारा।
भवसागर को तरन विदित यह पोत उदारा ॥१८॥

प्रसंग—अब श्री अयोध्या जी को श्रृंगार हार श्री सरयू जी का ध्यान प्रभाव कहते हैं।

अर्थ—निकटहिं अर्थात् अवध के निकट आराम उपवन हैं। तिन आरामों के निकट ही श्री सरयू हैं। सर ते उत्पन्न भई ताते सरयू नाम है। सो सरित अस उज्जल नाम श्वेत शांत रस रूप अथवा उज्ज्वल श्रृंगार रस रूप, काहे कि श्रृंगार रस नेत्र-जन्मा है और सरयू भी श्री रामनेत्रजा हैं। सो धारा को धारण किये हैं। सो धारा अस है कि भव संसार सागर को तरन नाम पार होने के हेतु यह धारा विदित अर्थात् वेद विदित उदार पोत नाम जाहिर जहाज हैं।

उदार कहने का भाव यह कि ऊँच-नीच, पुण्यात्मा पापी, काहू को रोक-टोक नहीं। बिना दाम ही चढ़ने-उतरने की जामे सो, तामे श्रीमुख वचन प्रमाण :—

"जा मज्जन ते बिनहिं प्रयासा। मम समीप नर पावहिं वासा ॥"

तथा उदारता वर्णन ॥

॥ कवित्त ॥

जग के तमाम नर वाम रामधाम जात,
नाम गुन ग्राम सुचि सरजू के सुनि-सुनि।
जम की जमात जम द्वारे बिललात रहे,
पावत न पापी पछितात सीस धुनि-धुनि ॥
अंग-अंग फूल 'रसरंग मनी' कूल बसि,
राम गंग महिमा महान अस गुनि-गुनि।
तारिबे को तरल तरंग हाथ से उठाय,
मानहु पुकारती है पातकिन पुनि-पुनि ॥

तहाँ स्नान-पानादि सोई नौका में चढ़ना है। औ पार उतरना धारा जहाज के एक धर्म की उपमा है ॥१८॥

॥ मूल ॥

हरन पाप त्रय ताप जनन चिंतत फल देनी।
सुकृती जन आरोह सुदृढ़ बैकुंठ निसेनी ॥१९॥

अर्थ---पुनि कैसी हैं सरयू जी की धारा कि कर्म, वचन, मन के पाप अरु तिन पापन के फल जे त्रिविध दैहिक, दैविक, भौतिक ताप तिनकी हरन हारी हैं। अरु चिंतन, नाम स्मरण करिकै प्रार्थना करे ते चारो फल देनेहारी हैं। अरु सुकृती जनौं के वैकुण्ठ लोक में आरोह नाम चढ़िबे को सुन्दर दृढ़ निसेनी कहे सीढ़ी है। अर्थात् श्री सरयू जी को श्री रामरूपा मानि तथा तिन को जल रामकृपामय जानि, जे सुकृती दर्शन, पूजन, मज्जन, पान प्रतिदिन करते हैं; ते मानो वैकुण्ठ धाम के सीढ़िन में चढ़ि रहे हैं। देहांत में बैकुण्ठ धाम में प्राप्त होहिंगे। सुकृती जन कहने को भाव यह है कि बहु जन्म के सुकृत बिना श्री सरयू में प्रेम नहीं होय। अरु सुदृढ़ पद प्रभु प्राप्ति हित सुदृढ़ साधन जनाये। इहाँ वैकुंठ केवल विष्णु लोक ही की संज्ञा नहीं है, किन्तु जो परम धाम अयोध्या को अर्थ है, सोई वैकुंठ को है। जैसे कालादिकौं ते युद्ध में न जीती जाय, ताको अयोध्या कहिये; तैसे कालादिकौ ते कुंठित नाम हत न होय, ताको वैकुंठ कहिये, अर्थात् परम धाम अयोध्या।

यथा—"सुनु मति मंद लोक वैकुंठा।"

शंका---श्री सरयू को प्रथम भवसागर की जहाज कहे, पुनि वैकुंठ निसेनी क्यों कहे ?

समाधान—प्रथम असुकृती सुकृती सबन को सामान्य भवसागर तारना अर्थात् जन्म-मरन छुटाय देना कहे, पुनि सुकृतीन को वैकुंठ धाम श्री राम समीपता प्राप्ति विशेष मुक्ति जनाये। आगे सुजन जानैं ॥१९॥

॥ मूल ॥

तीर नरन की भीर लगत अस परम सुहाये।
मनहुँ व्योम को त्यागि अमरगन सेवन आये ॥२०॥

अर्थ—तहाँ श्री सरयू तीर में स्नान करन हारे नरन की भीड़ है, ते नर अस शोभायमान लागते हैं कि मानो व्योम स्वर्ग को त्यागि कै इन्द्रादि अमरगण श्री सरयू को सेवन हेतु आये हैं।

यामें श्री अवधि निवासशीलौं को रूप तेज इन्द्रादिकों के सम, अरु आकाशगंगा ते श्री सरयू को माहात्म्य अधिक व्यंजित है ॥२०॥

॥ मूल ॥

करैं जो मज्जन पान धन्य बड़ भाग जनन के।
विविध भाँति के घाट तहाँ मन थकित मुनिन के ॥२१॥

अर्थ—अब संक्षेप ते श्री सरयू सनेहिन की प्रशंसा करते हैं औ सिहाते हैं।

अहो जो नित्य श्री सरयू जी को मज्जन-पान करते हैं, तिन जनन के बड़े भाग हैं अरु अति धन्य हैं। यह कहने में निज नित्य प्रत्यक्ष स्नान पान के वियोग की अनुताप भी भासै है।

अरु श्री सरयू जी में विविध भाँति के अर्थात् चारों वरणन के जुदा-जुदा, नारिन के हित जुदा घाट कंचन मणिन ते वँधे हैं; तिनकी शोभा देखि कै मुनिन के जे सहज विरागी मन हैं, तेऊ मोहि के थकित होते हैं ।।२१।।

॥ मूल ॥

नीर परम गंभीर चलत गहिरे सुर गाजै ।
तहाँ तीर बहु सघन कमल अति सुन्दर राजै ।।२२।।

अर्थ—अरु श्री सरयू जी में नीर परम गंभीर नाम अति गहिर है सो चलते में गंभीर स्वर ते गरजै है । मानो सिंह रूप गरजि कै हाथी रूप पापौं को भगावैं हैं । पुनि जहाँ घाट बन्धे हैं तहाँ तीर में बहु नाम बहु प्रकार के अरुण, सेत, पीत, नील बहुत सघन कमल अति सुन्दर राजते हैं नाम शोभित हैं । अति सुन्दर अर्थात् लक्ष्मी जी के मन्दिर सम किन्तु श्री सीताराम जी के तन कर चरण नयनन सम हैं । धारा में कमल की शङ्का होने योग्य नहीं है, काहे कि सतयुग त्रेता में सरयू गंगादिकों को प्रभाव परम प्रगट रहा । ताते कमलों को बहाउती नहीं रहीं । इसी ते कमल फूलते रहे ।।२२।।

॥ मूल ॥

कमल कमल के मध्य जूथ मिलि भँवर गुंजारै ।
मानहुँ मुनि जन वृन्द वेद धुनि शब्द उचारै ।।२३।।

अर्थ :—तिन प्रति कमलन के मध्य में जूथ नाम बहुत मिलि कै भ्रमर रसपान करि कै, पराग में रँगे, मत्त मुदित गुंजार करि रहे हैं, सो मानो मुनिजनौं के वृन्द वेदधुनि को शब्द उच्चारण करि रहे हैं । इहां अनेकन भ्रमरौं को मिलित प्रिय शब्द की उपमा है । सोई श्री गोस्वामी गीतावली में कहे हैं । (पद)❀ विकसित कमलावली चले प्रपुंज चंचरीक, गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे । जनु विराग पाइ सकल शोक कूप गृह विहाय भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे ।।२३।।

॥ मूल ॥

त्रिविध वयारि विहार बहत निसि दिन अघहारी ।
सीतल मंद सुगंध परम अति आनँदकारी ।।२४।।

अर्थ :—तीन प्रकार की वयार नाम पवन विहार रूप अघ नाम पाप दुःखहारी रात दिन बहै है । इसी का अर्थ दूसरे पद में है । तीन विधि कौन है कि शीतल, मन्द सुगन्ध अर्थात् मलय मिलित, पुनि श्री सरयू स्नान करिकै श्री अवध आरामन के फूलन

❀श्रीगीतावली बालकाण्ड पदसंख्या ३८ "जागिये कृपानिधान जानराय रामचन्द्र"

—शत्रुहनशरण

की सुगन्धि हरि कै, परम शीतल सुगन्ध, मंद मंद अति आनन्दकारी विहार रूप में बहै है। अघहारी को हेतु श्री सरजूजलमज्जित, अवधरजरंजित सगरिकर श्री सीता-रामजी के श्री अंगन के संसर्ग सम्पत्ति से पवित्रतर है। ताते तन के और स्वास संग अंतर के अघहारी है ॥२४॥

॥ मूल ॥

बोलत चकवा कुंड तीर मन मोद बढ़ावैं ।
मानहुँ परम सुदेश निकर मिलि गंध्रव गावैं ॥२५॥

॥ अर्थ ॥

चकवा पक्षी कुंडन के तीर अर्थात् श्री सरयूजी में गहिरे कुंड हैं, जैसे श्रीलक्ष्मण-कुंड, निर्मलीकुंडादि अरु बाहर जैसे श्री सीताकुंड, विद्याकुंडादि; तिनके तीरन में बोलते हैं। सुनत संते मन में मोद बढ़ाते हैं। मानहु गन्धर्व निकर कहे वृन्द वृन्द मिलि कै, सुदेश नाम स्वर, राग, ताल, बन्धान ते; तथा सुदेश नाम सुन्दर पवित्र ठौर में श्री सीतारामचन्द्र जी के गुण गावते हैं ॥२५॥

॥ मूल ॥ श्री अशोक वन ॥

कानन तहाँ अशोक֍ शोक तेहि देखत भाजै ।
विविध भाँति के वृक्ष सबै वृन्दारक* राजै ॥२६॥

प्रसङ्ग—इहां लगि श्री अवध उपवन श्री सरयू जी का ध्यान वर्णन किये, अब मुख्य कहते हैं।

अर्थ—कानन तहाँ अशोक, तहाँ श्री अवधि सरयू के सन्धि में, कानन श्री सीता-रामजी को नित्य विमल विहार वन अशोकनाम यथा नाम तथा गुण भी कहते हैं। शोक तेहि देखत भाजैं, शोक जो स्वस्वरूप परस्वरूप प्राप्ति में संशय रूप दुःख, सो तेहि कानन को प्रत्यक्ष किन्तु ध्यान में देखत संते भाजै हैं। सो जब शोकसंशय दुःख भागा, तब स्वस्वरूप प्रभुस्वरूप के अनुभव को सुख नाम प्रमोद आया, याही ते इसकी प्रमोद वन संज्ञा है।

֍ विपिन असोक जहँ व्यापत न सोक सिय अलिन के थोक रास ओक बहु सोभाकर।
क्रीडाचल सरित सरोवर विहंग वर वाटिका सुघर सुरतरु पांति लताधर ॥
नाग नर देव नृप गंधर्वसुता अनेक कोटिन के वृन्द मध्य राजै नित सियावर।
सरजू के तीर बहै सीतल समीर तहाँ बैठि वर नीर निरखत पुलनादि धर ॥
—श्री रसिकप्रकाश भक्तमाल से

श्री अशोक वाटिका विलास श्री विदेहजाशरण महाराजकृत तथा आर्षप्रमाण के लिए श्री वाल्मीकीय रामायण उत्तरकांड सर्ग ४२ देखिये।

* वृन्दारक=देव।

अरु श्री वाल्मीकिजी अशोक वनिका नाम कहे हैं। श्री जानकी गीत में अशोक वाटिका कहे हैं अरु उपनिषद् में सोमस बन करि कै कहे हैं।

परमधाम में तिस बन में विविध भाँति के वृक्ष हैं अर्थात् विविध भाँति के जाति के विविध भाँति के रंग अरु आकार के हैं।

मुख्य जाति अशोक, आम, आमरा, कदंब, बेल, कदली, चंपक, तमाल, नारियर, जामुन, पनस, सुपारी, मेवा, बादाम, छोहारादि अनेकन हैं।

रंग हरित, नील, पीत, अरुण, राजते हैं।

आकार कोई ऊँचे, कोई नीचे, कोई लघु विस्तार के, कोई दीरघ विस्तार के हैं।

तैसे ही कुसुमित ललित लतानके वृन्द लहराय रहे हैं।

ते सबै वृन्दारक राजैं अर्थात् प्रशस्तवृन्द वाले, देवता अंश शक्तिन ते वृक्ष बेलिन के वपुष बनाय युगल प्रभुन के सुख सेवा हित राजते हैं। अरु सबै जे देववृक्ष मंदार, पारिजात, संतानक, कल्पतरु, हरिचन्दन, ते भी राजते हैं ॥२६॥

॥ मूल ॥

साखा पत्र अनूप कहा कहों सोभा उन की।
फल कुसुमन के झुंड निरखि सुधि रहत न तन की ॥२७॥

अर्थ—तिन वृक्षन के शाखा पत्र अनूप हैं। कवि कृपाल कहते हैं कि उनकी शोभा मैं मुख ते कहा कहौं ? क्योंकि सबै वृन्दारक हैं, ताते अनूप अकथ हैं। केवल मनमोद-दायक हैं ? अरु फल कुसुमन के झुंडन ते ऊँचे ते नीचे ताईं मंडित हैं। तिनको निरखि कै तन की सुधि नहीं रहती। अर्थात् ते वृक्ष श्री सीताराम युगल कृपाल के करकमलन ते परसित हैं अरु अवलोकनि कृपा अमृत तें सिंचित हैं। ताते आनन्द में डुबाय कै तन को भान भुलाय देते हैं ॥२७॥

॥ मूल ॥

कल्पवृक्ष के निकट तहाँ यक धाम मनिन जुत।
कंचनमय सब भूमि परम अति राजत अद्भुत ॥२८॥

अर्थ—तहाँ कल्पवृक्ष के निकट एक मुख्य धाम मणिनयुत कंचनमय हैं। तैसहीं मणिनयुत कंचनमय सब भूमि है। अति अद्भुत प्रकाशमय सोहत है। अर्थात् जहाँ सबै वृक्ष वृन्दारक राजते हैं, तहाँ मध्य में दिव्य कल्पवृक्ष है। ताके करुण रस रत्नमय मूल है। अरु दण्डवत् पुष्ट नील रंग पेड़ को स्तम्भ है। तैसही नीले रंग के मणि सम प्रकाशमय स्कन्ध शाखा हैं। अरु हरित रंग के पत्र परम कोमल प्रकाशमय हैं। सुधा सम, सुगन्धि सहित, लाल रंग के फूल हैं। अरु चिन्तामणि सम अरुण आनन्दप्रद

सुधारसरूपी फल हैं। पुनि तेहि वृक्ष ते अमृत के बुन्द सदा झरा करते हैं। सो श्री सीताराम युगल कृपाल के करुणा, औदार्य, वरप्रदानता गुण को रूप है, वह कल्पवृक्ष। ताके निकट एक नाम मुख्य, सब धामों में उत्तम, अद्भुत नाम विचित्र अलौकिक धाम है।

यह श्री अग्राचार्य स्वामी श्री सीताराम जी को ध्यान सर्वसम्मत कहते हैं। अर्थात् श्रीरामतापनी, श्रीरामस्तवराज, अगस्त्यसंहिता, सुन्दरीतंत्रादि श्रीराम-रहस्य ग्रंथन को सार भाग है। अरु निज भावना शृंगार सख्य दास्यादि रसानुकूल है तथा नित्य नैमित्य ऐश्वर्य मिलित महा माधुर्य्यरूप है।

सो मुख्य धाम कैसो अद्भुत है कि कमलाकार है। तहाँ प्रथम आवरण को जगमोहन चारो ओर है। तामें कंचनमणि खचित, खम्भ रचित, महामनोहर, मेहराब-दार बत्तीस द्वार हैं। तिनके ऊपर छबीले छज्जा छाजते हैं। ते बत्तीसों द्वार मानो कमल के वत्तिस दल हैं। ताके अंतर चारों तरफ दूसरा जगमोहन है। तामे सुन्दर सोरह द्वार हैं। ताके अंतर तैसही कमलाकार, गोल, चौतरफ विशाल, वारह द्वार हैं, सो तीसरा जगमोहन है।

ताके अंतर चौफेर आठ द्वार कोकिलाकार गर्भ मन्दिर है। तैसहीं श्रीराम यंत्रराज में प्रथम वाहेर को महाकमल वत्तिस दल को है। ताके अन्तर दूसरा कमल सोरह दल को है, पुनि तीसरा कमल वारह दल को है, चौथा कमल आठ दल को है, अरु पंचम कमल भी आठै दल को है। सोई मन्दिर के मध्य में अष्ट पहल सुवर्ण वेदिका है। ऐसो अद्भुत धाम है ॥२८॥

॥ मूल ॥

स्वर्ण वेदिका मध्य तहाँ एक रतन सिंहासन।
सिंहासन के मध्य परम अति पद्म सुभासन ॥२९॥

अर्थ—सो वेदिका विपुल प्रकाशमय महामनोहर रची है। तहाँ वेदिका पर एक नाम मुख्य अद्वितीय रत्न सिंहासन है। राजसिंहासन को जो आसन होय, ताको सिंहासन कहियो सो यह रत्नो ते रचित श्री सीता समेत रघुराज किशोर सिंह को आसन है।

अष्ट पावन युत अष्टकोण है। पावन प्रति सिंह के सावक सोहते हैं।

तेहि सिंहासन के मध्य में अति परम पद्म को अर्थात् अति परम दिव्य अष्टधा प्रकृति अरु अणिमादि अष्ट सिद्धिनमय अष्टदल कमल को शुभ आसन है। कोई सहस्र दल कमल कहे हैं, परन्तु तापनी, स्वराज अरु श्री अग्र स्वामी के अष्टयाम में अष्ट-दलै है ॥२९॥

॥ मूल ॥

ताके मध्य सुदेस कर्णिका सुन्दर राजै।
अति अद्भुत तहँ तेज वह्नि सम उपमा भ्राजै ॥३०॥

अर्थ—ता कमलासन के मध्य सुदेस नाम सुन्दर मध्य भाग में कर्णिका का नाम बीच की वेदी सुन्दर है। अर्थात् चिन्मय परा प्रकृति जीवतत्व प्रकाशरूपा राजै है। ता कर्णिका के बीजापंचाशत वर्ण कहे हैं। ग्रंथान्तरों में तहाँ कमल कर्णिका में अति अद्भुत वह्नि नाम अग्नि सम उपमा को तेज भ्राजै है।

अर्थात् प्रथम सूर्य्य, पुनि चन्द्र, पुनि अग्नि मुद्रा हैं। परन्तु नीचे रवि सम तेज हैं; अरु ऊँचे अग्नि सम तेज है। बीच में चन्द्र सम तेज है, ताको श्वेत वर्ण अग्नि सूर्य्य तेज में मिलि गयो। केवल वह्नि सम देखि पड़ै है। तीनों मिले हैं। ताही ते अति अद्भुत तेज है ॥३०॥

॥ मूल ॥

ता मधि सोभित राम नील इन्दीवर ओभा।
अखिल रूप अंभोधि सजल घन तन की सोभा ॥३१॥

अर्थ—ता मधि अर्थात् ता जीवतत्त्वरूपा त्रिविध तेजोमय अनूपा कर्णिका के मध्य में अखिललोक-लोचनाभिराम श्रीराम नील इन्दीवर नाम नील कमल की ओभा कहे आभा युक्त शोभित हैं।

भाव यह है कि नील कमल सम अमल तन सुगन्धि माधुरी मकरन्द ते स्वजन मन मधुपन को आनन्ददानशील हैं। शोभा के अनुप्रास हेतु आभा को ओभा कहे हैं।

कैसे शोभित हैं कि अखिल रूप अंभोधि अर्थात् रूपरूपी अंभ नाम जल के अधिप राजा हैं। रूप कहिये—'नख ते शिख ताईं सब अंग सुन्दर होयँ बिन भूषण ही मानो विविध भूषण धारे हैं। निहारत ही नयन मन मधुमाखी सम फँस जायँ जामें, ऐसो जो रूप, अखिल नाम सम्पूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त ताहू के कारण, रूप-रूपी सुधा के सिन्धु हैं। अर्थात् रूपानुरागी जीव जलचरन के जीवन अयन हैं। सिन्धु के मुख्य तीन धर्म हैं। अथाह, अपार, डुबावन हार, ते रूप में तीनों हैं। पुनि सजल घन के सम तन की शोभा है। भाव यह है कि सजल घन के सम गम्भीर श्यामल शोभा है। तेहि तन ते सुख सलिल बरषते हैं। अरु वचन विमल गरजन ते स्वजन मन मयूरन को हरष पूरन करते हैं ॥३१॥

॥ मूल ॥

सिर पर दिव्य किरीट जटित मंजुल मनि मोती।
निरखि रुचिरता लजित निकर दिनकर की जोती ॥३२॥

अर्थ—श्री सुन्दर-शिरोमणि के शिर पर दिव्य किरीट मंजुल नाम महासुन्दर मणि-मोतिन ते जटित है। दिव्य कहे साक्षात् ब्रह्मा जी निज मन ते निर्माण किये हैं। मणि जटित हैं अरु सुराहीदार मोती ऊपर किनारे कलसी सम सोहै हैं।

ता किरीट की रुचिरता नाम प्रकाशमय सुन्दरता निरखि कै, निकर कहे समूह सूर्यन की जोती लज्जित होती है। लज्जित होने का हेतु यह है कि दिनकरौं की जोति त्रिगुणमय मलीन है, अरु किरीट की जोति गुणातीत अति स्वच्छ है। पुनि रवि जोति तापकारी है। यह शीतल सुखकारी है अरु रवि जोति थिरता रहित उदय अस्त होती है, औ किरीट जोति थिर एकरस है। ताते किरीट की रुचिरता लखि रवि वृन्दों की जोति लाजती है ॥३२॥

॥ मूल ॥

कुंडल ललित कपोल जुगल अति परम सुदेसा।
तिन को निरखि प्रकास लजित राकेस दिनेसा ॥३३॥

अर्थ—अति ललित कुंडल अति ललित युगल कपोल परम सुदेश में हैं। तिन कुंडलन को प्रकाश निरखि कै राकेश चन्द्र, अरु दिनेश लज्जित होते हैं।

हेतु यह कि कुंडलौं के मोतिन को प्रकाश निरखि चन्द्र अरु लालमणिन को प्रकाश निरखि सूर्य्य लज्जित होते हैं; क्योंकि दोनों ते कुंडलौं को प्रकाश विलक्षण है। अथवा तिन कपोलों को प्रकाश लखि चन्द्र औ तिन कुंडलौं को लखि दिनेश लज्जित होते हैं। कपोलौं को चन्द्र की उपमा प्रसिद्ध है। अति परम एक अर्थ है। ताते ललित के संग सम्बन्ध किया है और ललित पद देहली दीपक सम कपोल कुंडल दोनों को प्रकाश देय है ॥३३॥

॥ मूल ॥

मेचक कुटिल सुचारु सरोरुह नयन सुहाये।
मुख पंकज के निकट मनहुँ अलि छौना आये ॥३४॥

अर्थ—अरु मेचक कुटिल सुचारु हैं। मेचक कहे काले अर्थात् वार इहाँ मेचक, यह वारौं को गुण नाम है, ते मेचक वार कुटिल कहे घुंघुंरारे हैं; सुचारु कहे सूच्छम चित्र-कारे हैं। अरु जो सिरोरुह पाठ राखिये, तो सिरोरुह नाम केस मेचक, कुटिल, सुचारु हैं। यह अर्थ है। परन्तु पुस्तकों में सरोरुह पाठ है, ताते यह अर्थ किया है।

अरु सरोरुह कहे कमल सम नयन शोभायमान हैं, अर्थात् कमल सम रतनारे, विशाल विकसित, उजियारे, मोद मकरंद धारे, प्रीति पराग के अगारे, शोभा शील सुगन्धि सहित अति प्यारे हैं। यथा—

॥ सवैया ॥

वांके वड़े उमड़े सुखमा उपमा मृग खंजन मीन लहै ना।
लाल सितासित रंग भरे 'रस रंगमनी' मनमोहन पैना ॥

सुन्दर शारद सारस के सम सील रसील सुशील के ऐना ।
नैनन मेरे वसैं नित जान जियावन जानकिनाथ के नैना ॥

अरु ते घुँघुँरारे वार कपोलन के पास कैसे सोहै हैं कि मानो परम प्रफुल्लित पंकज हैं। ताके निकट अलि भ्रमर के छौना सुगन्धि मकरन्द हित आये हैं। कोमल केशन के छल्ले छोटे छोटे हैं, ताते छौना कहे ॥३४॥

मूल

भृकुटी त्रयपद दुगुन मनहु अलि अवलि विराजैं ।
नासा परम सुदेस वदन लखि पङ्कज लाजैं ॥३५॥

अर्थ—श्री भानुवंश विभूषण जू की भृकुटी कैसो है कि त्रयपद-दुगुन कहे षटपद अर्थात् भ्रमरों की अली नाम भ्रमरीन को मनहु पंगति विराजै है। भाव यह है कि भृकुटी आगे मोटी हैं ते मानो भ्रमरा हैं औ पीछे पतली हैं ते मानो छोटी छोटो भ्रमरी हैं। इहाँ उतार चढ़ाव के उपमा हेतु भ्रमर भ्रमरी दोनों को अवली कहे, अलि पद को केवल भ्रमरी अर्थ—प्रमाण इन्हीं श्री अग्रस्वामी जी के अष्टयाम को श्लोक—

"भ्रमरालिकुलैर्युक्ते पुष्पगन्धानुमोदिते ।
शुकशारिकामयूरैश्च कोकिलैरभिकूजिते ॥"

अर्थात् भ्रमर अरु अली भ्रमरी तिन के कुलों करिकै युक्तवन है। इस श्लोक में अलि केवल भ्रमरीन को प्रगट है, ताते यह अर्थ मुख्य है। अरु मनोरंजनार्थं दूसरा अर्थ करते हैं।

त्रयपद कहे काल अर्थात् भूत, भविष्य, वर्त्तमान एई हैं तीन पाद नाम विभाग अथवा लक्षण जिसके ऐसे त्रयपद नाम काल को दुगुण नाम उत्पन्नता लीनता ए दोऊ गुण हैं जिन भृकुटिन करि कै, ते भृकुटी कैसी है कि मनहु अलि वृन्दों को अवलि विराजै हैं। इति।

अरु नासा परम सुदेश नाम परम सुन्दर है अर्थात् तिल-प्रसून, काम-तूण, शुक-तुंड, आदि की शोभा जाके आगे भदेश है। तैसही श्री विदेहजा विहारी को विमल वदन लखि कै पंकज लाजै हैं; क्योंकि कीच का पुत्र है अरु क्षण ही में मुरझाय है ॥३५॥

मूल

चितवनि चारु कृपाल रसिक जन मन आकर्षत ।
मंद हास मृदु वचन जनन को आनंद वरषत ॥३६॥

अर्थ—अरु चितवनि चारु कृपाल है, चारु (सुठि सुन्दर) कृपा करि कै अल कहे पूरण है। सो रसीली चितवनि के रसिक जे शृङ्गारी सखा दासादिक जन हैं, तिनके मनों को आकरषत कहे खींचि लेय हैं। किसी के मन को केवल चारुतै के, किसी के

मन को केवल कृपालुतै ते, किसो के मन को दोऊ करिकै खैंचि के निज वश करि लेत हैं। अरु मंद हास, मृदु वचन तो रसिक, अनरसिक, बालवृद्धादि सब स्वजनों को आनन्द वरषै हैं। मानो मैथिली वल्लभ महा मञ्जुल मेघ निज मन्द हँसनि दामिनी दमकाय, मृदु वचन मधुर धुनि सुनाय, आनन्द वारि बरषाय, स्वजन सालि समूहों को हरे करि हरषाय रहे हैं ॥३६॥

॥ मूल ॥

दीरघ दीप्त ललाट ज्ञान मुद्रा दृढ धारी।
सुन्दर तिलक उदार अधिक छवि सोभित भारी ॥३७॥

अर्थ—अरु दृढ़ ज्ञानमुद्राधारी श्री सीताविहारी जी को ललाट दीरघ कहे विपुल विशाल है। अरु दीप्त कहे परम प्रकाश युत है। ज्ञानमुद्रा दृढ़धारी कहिये स्वराज्य सिंहासन में विराजमान मन को अखंड ज्ञान मुद्रा नाम आकृति ते मुद्रित करि कै निज महिमा स्वानन्द शान्ति में दृढ़ स्थित है। यह मुद्रा आप की स्वरूपानुभव रूपा है, परन्तु मुक्त जोवों को अति दुर्लभ है, बिना कृपा सामान्यों की कहना क्या है?

पुनि दूसरी ज्ञानमुद्रा यह है कि दक्षिण हाथ को अंगूठा तर्जनी में मिलाय कै तीनों अंगली पसारि पसारि देना अरु हाथ को हृदय के सामने थिर करि मन दृष्टि भी थिर रखना। यह मुद्रा भी श्री राम ध्यानों में प्रसिद्ध है।

पुनि तेहि ललाट में सुन्दर पीत अरुण उदार (कहे स्मरण मात्र ते मनोरथ पूरक) तिलक है। सो उदार तिलक को अधिक छवि ते ललाट भारी शोभित है। तिलक का कोई आकार नहीं कहे; परन्तु साम्प्रदाय ग्रंथों में लिखा है कि श्री गुरुन ते अपने को जैसा तिलक मिला होय, तैसही प्रभु के ध्यान करै अरु अर्चा स्वरूपों में धारण भी करावै ॥३७॥

॥ मूल ॥

परम ललित मनिमाल हार मुक्ता छवि राजै।
उर श्रीवत्स सुचिह्न कंठ कौस्तुभ मनि भ्राजै ॥३८॥

अर्थ—जब ध्याता जी की दृष्टि ललाट ते उर कंठ में आई। सो कहते हैं। कंठ ते उर लौं परम ललित मणिन की माला अरु मुक्ताहारन की छवि राजै है नाम प्रकाश सहित सोहे है। और उर में दक्षिण भाग में महापुरुष लक्षण महासौभाग्यज्ञापक श्वेत रोमों की भ्रमरी सात के अङ्क सम दक्षिणावर्त श्रीवत्स चिह्न भ्राजै है। ताके ऊपर कंठ में लाल कमल सम रंग को कौस्तुभ मणि भ्राजै है (अति प्रकाश करे है")। श्री वत्स कोई महानुभाव पीतरंग कहे हैं, परन्तु श्री पराशर भट्ट श्री विष्णुसहस्रनाम भाष्य में श्वेत ही कहे हैं। अरु कोई वाम ओर भी लिखते हैं ॥३८॥

॥ मूल ॥

जग्योपवीत सुदेश मध्य धारा जु विराजै।
उभै भुजा आजानु नगन जटि कंकन राजै ॥ ३९ ॥

अर्थ—यज्ञोपवीत पीत सुदेस नाम सुन्दर मध्यभाग में वाम कंधे ते दहिन कटि लौं धारा ज्यौं विशेष राजै है अर्थात् नील शैल में जैसे पीत पराग रंजित सरित राजै तैसे सोहे है। अरु उभय नाम दोऊ भुजा आजानु कहे जानुपर्यन्त लम्बी हैं। तिन में नग अमोल मणिन ते जटित कङ्कण राजै है ॥३९॥

॥ मूल ॥

चूनी रतन जराय मुद्रिका अधिक सँवारी।
सोभित अद्‌भुत रूप अरुन की छवि अनुहारी ॥४०॥

अर्थ—तिन भुजान की करांगुलीन में चुन्नी रतनौ के जड़ाव ते जड़ित मुद्रिका अधिक सँवारी है। अधिक सँवारी को भाव यह है कि रत्न कहे हीराजड़ित ताके अंतर चुन्नी के चिन्मय श्री रामनाम है। ताते लोक के मुद्रिकों ते अधिक अलौकिक सँवारी है। अतएव सो मुद्रिका अद्‌भुत रूप शामिल है। अरुण (सूर्य) के अनुहार तेजोमय छवि है।

कवित्त

सरधनु धरन दरन दुख दीनन के,
भरन करन विश्व भर के उदर के।
सुरसा सुवन से है दादुर दुवन के,
विभूषन भुवन के वरद हरि हर के।
मंडित हैं रसराम अंगुलिन अभिराम,
रामनाम अङ्कित त्यों मुद्रिका सुघर के।
मनि से नखर के वरन दिनकर के,
सुकंज सोभा सर के हैं कर सियवंर के।

अथवा अद्‌भुत रूप श्री रामरूप ही को विशेषण है। किरीट मुद्रिकादिकौं की शोभा ते शोभित रूप अद्‌भुत है। छवि अरुण की अनुहारि नाम प्रकाशमय है ॥४०॥

॥ मूल ॥

भूषन विविध सुदेस पीतपट सोभित भारी।
लसत कोर चहुँ ओर छोर कल कंचनधारी ॥४१॥

अर्थ—मुख्य भूषणों को कहि कै अब अनेक उपासकों के रुचि अनुरूप और भूषण कहे देते हैं। भूषन विविध (अनेक प्रकार के) सुदेस कहे सुन्दर तथा सुदेस (श्री राम-के अङ्ग सुदेशों में हैं) जैसे नाभि के ऊपर नव रतन रचित श्री रामनाम [illegible]

पदिक है। बाहून में विचित्र विजायठ है, बनमाला है, इत्यादि अनेकन भूषण शोभित हैं, अरु पीतपट अर्थात धोती कटि मंडल में सोभित है। अरु पीत उपरना अंशदेशन ते कटि लौं ललित लटके हैं। तिन पटौं में चहुं ओर कोर कहे अरुणारी किनारी अरु कल (सुन्दर) कंचन सूत की धारी लसती है। अरु उत्तरीय में जरतारी के छबीले छोर छहरै हैं। सो पीतपट प्रभु के श्यामलांगौं में भारी कहे बहुत शोभित हैं अर्थात् जैसे तरुण तमाल तरु पर प्रफुल्लित पीत लता सोहै, पुनि श्यामलमणि शैल पर जैसे प्रभात के प्रभाकर की प्रभा सोहै तथा श्रृंगाररस रूपी नद में जैसे शोभा की सरित सोहै, तैसे इन तीनौं ते भारी शोभित हैं, मानो सियाजू के देह की दुति वल्लभ वपु अनुकूल दुकूल बनि कै विलसै है ।।४१।।

।। मूल ।।

रोमावलि बनि आइ नाभि अस लगति सुहाई।
त्रिवली तामधि ललित रेख त्रय अति छवि छाई ।।४२।।

अर्थ—रोमावली की लीक सूच्छम ललित नील हृदय ते नाभि लौं अति बनि आई है। अरु नाभी अस कहे अति शोभायमान लागती है। दहिनावर्त्ती गंभीर है। औ उदर में त्रिवली हैं, जिन्हें लोक में पेटी कहते हैं। ता त्रिवली के मध्य में ललित तीनौं रेखा हैं; तिन की छवि उदर में छाय रही है ।।४२।।

।। मूल ।।

कटि परदेस सुढार अधिक छवि किंकिनि राजै।
जानु पुष्ट बनि गूढ़ गुल्फ अति ललित विराजै ।।४३।।

अर्थ—श्री कौशलेन्द्र लाल को कटि प्रदेश सुढार कहे गोल पातर उतार चढ़ाउ है। तामे कंचन मणि जटित कल धुनि करनि किंकिणी राजती है, ताकरि कै कटि को अधिक छवि है। कटि के नीचे नितम्ब ऊरु जानू परम पुष्ट गोल बनी है। तैसेही जानू के नीचे के भाग भी गोल चढ़ाउ उतार हैं और गुल्फ ऐंड़िन के ऊपर की गाँठैं गूढ़ छिपी हैं, ताते अति ललित विशेष राजै हैं ।।४३।।

।। मूल ।।

नूपुर पुरट सुचारु रचित मनि मानिक सोहैं।
रव कल सुर संगीत सुनत परिजन मन मोहै ।।४४।।

अर्थ—वाही ठौर नूपुर पुरट (सोने के) सुचारु (सुठि सुन्दर) नीचे हरित मणि ऊपर लाल रंग मानिक जटित रचित सोहते हैं। तिन को रव नाम शब्द कल कहे मधुर मनोहर सुरौं के संगीत सम हैं, सो रव सुनत संते परिजन कहे पासवर्ती परिकर परिवारौ के मन मोहि जाते हैं अर्थात् तदाकार अचल ह्वै जाते हैं ।।४४।।

॥ मूल ॥

जुगल अरुन पद पद्म चिह्न कुलिसादिक मंडित ।
पद्मा नित्य निकेत शरणगत भव भय खंडित ॥४५॥

अर्थ—श्री जानकीकांतजी के युगल पद अरुण पद्म (कमल) सम कोमल सुगन्धि-युत हैं। अरु कुलिस कहे वज्र है आदि में जिनके, ऐसे जे अरतालिसों चिह्न, तिन करिकै मंडित (भूषित) हैं। ते अरुण पद्म, सम श्री रामपद श्रीपद्मा (लक्ष्मी जी) के नित्य ही निकेत गृह हैं। अर्थात् शोभा रूपा अरु चिह्नस्वरूपा लक्ष्मी जी सदा वास करती हैं।

अरु शरणागत जनौं की भव भय खंडित हैं जिन्हौं करि के ऐसे हैं अर्थात् श्री राम-चरणौं को शरण कहे रक्षक मानि जे जन गत कहे प्राप्त ह्वै के प्रणाम करते हैं, तिन की भव (संसार) की भय जन्म मरण रूप खंडित हो जाती है। ते जन अभय पद पावते हैं ॥४५॥

॥ मूल ॥

दक्षिण भुज सर सुभग सुहावन सुन्दर राजै ।
दिव्यायुध सु विसाल वाम कर धनुष विराजै ॥४६॥

अड़तालिस चिह्नौं के वर्णन ॥ कवित्त ॥

ध्यावै रसराम रामपद चिह्न दाहिने में,
ऊरध सुरेखा मन स्वस्तिक सुआनि कै ।
अष्टकोन रमा हल मूसल सरप पर,
अंवर जलज रथ वज्र जव जानि कै ।
कल्पवृक्ष अंकुस ध्वजा मुकुट चक्रराज,
आसन सु जमदंड जम भीति भानि कै ।
चामर सुछत्र नर जव माला एई अंक,
सीय पद वाम में विलोकत वखानि कै ॥१॥

राम वाम पद चिह्न ध्यावै रसराममणि,
सरजू सुगोपद सुभूमि उर आनि कै ।
कलस पताका जम्बूफल अर्द्धचन्द्र शंख,
षट कोन त्रय कोन गदा जीव जानि कै ।
विन्दु शक्ति सुधा कुंड त्रिवली त्यों मीन मंजु,
पूरो चन्द्र वीन वंशी धनु सुख सानि कै ।
तूण हंस चन्द्रिकादि एई अंक सीय पद,
दाहिने में देखत महान मोद सानि कै ॥२॥

श्री दीनजन रक्षकजी के दक्षिण भुज में शर (वाण) सुभग सुहावन सुन्दर ये तीनों एक अर्थ के पद हैं। तिन की पुनरुक्ति सम्बन्ध ते मिटती है। सुभग भुजा में सुन्दर शर सुहावन राजै है, नाम प्रकाश करै है, एक सुभगता भुजा की, दूजी सुन्दरता शर की, तीसरी सुहावनता भुजा में शर धारण की है।

किन्तु सुभग पंख, सुहावन डांडी, सुन्दर फरयुत शर राजै है, सो कहे सुन्दर विशाल वाम कर में सुविशाल दिव्यायुध धनुष विराजै है, सुविशाल देहली दीपक पद हैं। भुजा आयुध दोनों को प्रकाशै है ॥४६॥ (श्री धनुष बाण के कवित्त अन्तिम पृष्ठ में देखिये।

॥ मूल ॥

षोडस वरस किशोर राम नित सुन्दर राजैं।
राम रूप को निरखि विभाकर कोटिक लाजैं ॥४७॥

अर्थ—षोडश कहे सोरह वर्ष के नित नाम नित्य सदा अखंड एक रस द्विभुज श्याम सुन्दर श्री रामकिशोर विग्रह साक्षात् शृङ्गार रस सिन्धु राजते हैं अरु श्री राम रूप को निरखि कै विभाकर कहे सूर्य कोटिन लाजते हैं। लाजने के हेतु यह है कि सूर्यन को प्रकाश त्रिगुणमय अरु ग्रहणादिकों ते ग्रस्तमान है अरु काल के वेग ते निरस्त है। अरु श्री राम रूप को प्रकाश तीनौं गुणन ते परे कालादिकौं ते अबाधित है। ताते कोटिन विभाकर लाजै हैं सो श्रुतिन भी कहै।

तत्र श्रुति :—

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥ २।२।१५ इति कठोपनिषदि

श्री रामचन्द्र जो सोरह वर्ष को अवस्था नित्य रहै हैं और देवताओं को २५ वर्ष नित्य रहे हैं ॥४७॥

॥ मूल ॥

अस राजत रघुवीर धीर आसन सुखकारी।
रूप सच्चिदानन्द वाम दिसि जनक कुमारी ॥४८॥

अर्थ—अब श्रीराम विग्रह को ध्यानपूर्ण करते हैं; अरु श्री जनककिशोरी जी को ध्यान कहैंगे। अस अर्थात् 'ता मधि शोभित राम' इहाँ ते लैके जस ध्यान कहि आये तस श्री रघुवीर अर्थात् पंच प्रकार की वीरता में विख्यात; त्यागवीर, दयावीर, विद्यावीर, धर्मवीर, पराक्रमवीर।

अरु सच्चिदानन्द रूप कहे सत् चित् आनन्दघन विग्रह अरु श्री वामोदर ...

के लक्षणों ते युक्त स्वजन सुखकारी सुख आसन ते राजते हैं नाम प्रकाश युत सोहते हैं। श्रीराम रूप शुद्ध सच्चिदानन्द विग्रह है। तामे प्रमाण श्रीरामतापनी की श्रुति।

"रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनासौ परंब्रह्माभिधीयते॥"
तथा—"अर्द्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रहः।" इति

भाषा रामायणेऽपि:—

"चिदानन्दमय देह तुम्हारी। विगत विकार जान अधिकारी
अधिकारी अर्थात् श्रीराम तत्व-परत्व के ज्ञाता सरस उपासक रूखे ज्ञानवादी नहीं।

पुनः "अस राजत रघुवीर धीर आसन सुखकारी" को भावार्थ। मानो धीर अर्थात् शान्त रस अचल आसन में वीर रस वेष ते सुखकारी शृंगार रस राजै हैं अर्थात् वीरता, धीरता, सुखदता ते पूर्ण सुखासन ते विराजै हैं दहिने ऊरु के नीचे वाम चरण अरु वाम ऊरु के ऊपर दहिना चरण धरि कै बैठे हैं। यही को सुखासन नाम है।

अरु श्री रघुवीर के वाम दिशि सच्चिदानन्दरूपिणी जगदानन्ददायिनी आदि-शक्ति श्री जनककुमारी जी विराजती हैं। रूप सच्चिदानन्द पद काकाक्षिगोलक न्याय ते श्री रघुवीर जनककुमारी दोऊ स्वरूपन को विशेषण है अर्थात् जैसे काक को एक ही गोलक दोनों नेत्रन को रूप बोधक है, तैसे रूप सच्चिदानन्द पद है। इहाँ जैसे राजमाधुर्यमय रघुवीर नाम कहे, तैसे मधुर मञ्जुल जनककुमारी नाम कहे। यामे माधुर्य्य लीला की नित्यता जानिये। अरु एक ही पद रूप सच्चिदानन्द युगल को विशेषण दिये। यामे तत्त्व की एकता जनाये।

अरु रूखे मतवादी जे जड़ प्रकृति माया मिथ्यादि मानते हैं, तिनके मतों को निषेध करिकै, श्रीरामतापनी वृहदारण्यकादि उपनिषद सच्चिदानन्द रूपवती कहे।

तत्र प्रमाण श्रीरामतापनीय श्रुतिः।
हेमा मया द्विभुजया सर्वालंकृतया चिता॥

अर्थ—चिता कहे चित्स्वरूपा सीता करिकै युक्त हैं। पुनः वृहदा० "स इमेवात्मानं द्वेधा पातयत्ततः पतिश्च पत्नीश्च भवतामिति श्रुतिः।"

सो सच्चिदानन्द परात्मा पूर्वोक्त इस अपने आत्मा को दो प्रकार आपातयत् नाम करते भये। तिस कारण से पति-पत्नी दो रूप भये॥४८॥

॥ श्री प्रियाजी का नख-शिख ॥

॥ मूल ॥

नगन जरे छवि भरे विविध भूषन अस सोहैं।
सुखद अंग उदार विदित आभीकर को हैं॥४९॥

प्रसंग—कवि कृपाल की श्री राम रूप तें दृष्टि श्री जानकी रूप में आई। सो विविध भूषणों ते युत सर्वांग प्रकाश विलोकि कै, पुनि जैसे शिरते प्रभु को ध्यान कहे, तैसहीं कहते हैं।

अर्थ—सो श्री जनककुमारी के सच्चिदानन्द रूप में चिन्मय नगन ते जड़े, छवि ते भरे, विविध (अनेकन) भूषण अस कहे अति सोहते हैं। अस शब्द देश भाषा में अतिशय को कहते हैं। जैसे क्या कहैं अस सुन्दर है नाम अकथ सुन्दर है। सो ग्रंथ में बहुत ठौर है, तहाँ अतिशय अर्थ है। अरु शिर ते पद लौं अङ्ग सुन्दर उदार विदित हैं अर्थात् श्री की भी श्री है। यथा—

(चौपाई)

"सिय सोभा किमि जाय बखानी। जगदम्बिका रूप गुन खानी।"

जो श्री रामरस भरित गौरांगी को सुवर्ण सम कहै, तो चामीकर (सुवर्ण) को है। श्री अंगों के आगे कौन वस्तु है। मायिक, जड़, कठोर, कलि को निवास।

॥ मूल ॥

अलक झलकता स्याम पीठ सोभित कल वेनी।
सुन्दरता की सींव किधौं राजति अलि श्रेनी ॥५०॥

अर्थ—अलकैं दोनों श्रवण समीप सूच्छम रची लहरै हैं। ते झलकता युत अर्थात् चिलकारी श्याम हैं। श्यामै पीठ पर कल कहे कमनीय वेनी शोभित है। तिनकी त्रिकलोपमा कहते हैं कि ये तीनों सुन्दरता की सींव कहे मर्यादा हैं। किधौं अलि (भ्रमरों) तिनकी श्रेणी नाम पाँति राजती हैं। अथवा अलकें हैं किधौं मुख सुन्दरता रूप राज्य की दोनों सीमा हैं।

अरु पीठ पर वेनी है किधौं कंचन को कदली के पत्ता पर भ्रमरों की पाँति राजती है ॥५०॥

॥ मूल ॥

रचित सुविविध प्रकार माँग जरतार सँवारी।
मनहुँ सुरसरी धार बनी सोभा अस भारी ॥५१॥
पाटन की लर और बड़े-बड़े उज्जल मोती।
सघन तिमिर के मध्य मनो उडगन की जोती ॥५२॥

अर्थ—श्री जनकतनया महा भाग्यवती जू की माँग जरतार तें सँवारी विविध प्रकार ते रचित हैं। अर्थात् सुवर्ण सूत्रों ते अरु छोटी मोतिन ते रचित हैं। तिन मोतिन के लड़न को उपमा कहते हैं कि अस कहे अतिशय भारी शोभा बनी है, मानो सुरसरी की धार है। भाव श्री रघुनन्दन को मन मातङ्ग जामें सदा क्रीडै है ॥५१॥

और माँग के ऊपर वेनी के मूल में तथा वेनी के छोर में नील रेशम के संग बड़े-

बड़े सेत मोती गुहे हैं, तिनकी कैसी शोभा होती है कि मानो सघन तिमिर नाम अंधकार के बीच में उडगण नाम तारागणों की जोति चमकै हैं ॥५२॥

॥ मूल ॥

रतन रचित मनि जटित सीस पर विंदा छाजे।
ललित कपोल सुजुगल करन ताटंक विराजै ॥५३॥
उज्जल भाल सुचारु अमित उपमा अस सोहै।
राजत परम सुहाग भाग को भवन किधों है ॥५४॥

अर्थ—रतन नाम सुवर्ण। अर्थात् सब धातुन से श्रेष्ठ जिन वस्तुन में होय, सोई रत्न कहावै है। ताते रचित अरु बहु रङ्ग मणि जड़ित विंदा कहे वेंदा श्री सिया जू के शीश पर छाजै है। अरु युगल कपोल अति ललित है, तथा करण में ताटंक जिन्हें लोक में तरौना कर्णफूल कहते हैं, ते विशेष राजै है अर्थात् नीचे झुमका भी सोहते हैं ॥५३॥

श्री भूमिसुता जू को भाल उज्जल कहे प्रकाशमान है औ सुचारु (सुठि सुन्दर) अमित है। ताकी उपमा ऐसी सोहती है कि परम सुहाग को भवन राजत है, किधौं भाग को भवन राजत है।

सुहाग नाम प्राणप्रिय पति को नित्य प्रेम अरु भाग माइके सासुरे में धन, जन, परिवार की पूर्णता। तिन दोनों शुभ लक्षणों को भाल भवन है ॥५४॥

॥ मूल ॥

गोरोचन को तिलक ललित रेखा बनि आई।
उन्नत नासा सुभग लसत वेसरि जु सुहाई ॥५५॥
भृकुटी नयन विसाल सौम चितवनि जग पावन।
मानहुँ विकसित कमल वदन अस लगत सुहावन ॥५६॥

अर्थ—पुनि तेहि भाल में अति ललित गोरोचन को तिलक रचित है। तेहि रचना की रेखैं बनि आई नाम शोभित हैं। गोरोचन पीत रंग अति सुगन्धित भाग्यवती गऊ के निकसै है।

अरु उन्नत कहे ऊँची सुढार सुभग (सुन्दर) नासिका है। तामे सुहाई अर्थात् सुवरण, मणि, मोतिन ते रचित अति हलकी वेसरि लसती है ॥५५॥

भृकुटी औ नयन दोनों विशाल हैं। तिन नयनन की चितवनि सौम्य नाम सूधी, शीतल, कृपा अमृत भरी अपावन जगत को पावनकारी है।

अरु प्रसन्न वदन अस सुहावन लागत है कि मानो विकसित कमल है ॥५६॥

॥ मूल ॥

अरुन अधर तर दसन पाँति अस लगति सुहाई।
चारु चिबुक बिच तनक बिन्दु मेचक छवि छाई ॥५७॥

कंठपोति मनिजोति सुछवि मुक्ता वर माला।
पदिक रचित कलधौत विराजत हृदय विसाला ॥५८॥

अर्थ—अरु अरुण अति मधुर अधर है। तिनके तरे दसनन की पंगति अति सुहाई लागती है। औ चारु (सुन्दर गोल) चिवुक (ठोडी) है। ताके वीच में तनक (सूच्छम) विन्दु मेचक कहे श्रीराम रसरंग सम श्याम हैं। ताकी छवि छाय रही है ॥५७॥

श्री जनक किशोरी जू के कंठपोति कहे कंठ में पृक्त अर्थात् कंठ में मिली सटी भई मणि कहे इन्द्रनील मणि की कंठिका, जोति नाम प्रकाशयुत, ताकी सुछवि छाय रही है। इहाँ पोति शब्द पृक्त शब्द को अपभ्रंश है ॥ यथा

"सिय तोरे गोरे गरे, पोति जोति छवि छाय।
मनहुँ रंगीले लाल की भुजा रही लपटाय ॥

—इति श्रीनेहप्रकाशिकायाम्

अरु विशाल हृदय में वर श्रेष्ठ मुक्तान की माला हैं। ताके बीच कलधौंत कहे सुवर्ण रचित मणि जटित पदिक विशेष राजत (सोहत) है ॥५८॥

॥ मूल ॥

हेम तंतु कर रचित अरुन सारी रँग झीनी।
कंचुकि चित्रित चतुर विविध सोभित रँग भीनी ॥५९॥

अर्थ— अरु हेम कहे सुवर्ण के तंतु नाम सूतो करके रचित झीनी अरुण रंग की साड़ी है। अर्थात् सुवर्ण सूत्रौ ते किनारी वेलि बूटे रचित हैं। अरु अरुण रंग अनुराग को है। ताते अनुराग उपजावन साड़ी धारे हैं।

अरु कंचुकी चतुरों की चतुराई ते विविध प्रकार चित्रित है। अर्थात् सोन सूत और सूच्छम मोती मणिन की कणिन ते कोर किनारी फल अरु हार आदि अनेकन भूषणों के चित्र रचित हैं। पुनः रंग भीनी कहे, मानो रंग से भीजी भई चुचाती है। ऐसी कंचुकी साड़ी के अन्तर शोभित है। रंग पीत है, सो अंग में मिलि गयो है, किन्तु श्री राम सम श्याम है अथवा अरुण सारी में हरा रंग भी खुलै है। यथा रुचि होय ॥५९॥

॥ मूल ॥

वर अंगद छवि देत बाँहु अस लगति सुहाई।
करन चुरी रंगभरी ललित मुँदरी बनि आई ॥६०॥
पद्मराग मणि नील जटित युग कंकण राजै।
मनहु वनज के फूल दुरेफन पंक्ति विराजै ॥६१॥

अर्थ—वर (श्रेष्ठ) अंगद (बाजूबन्द) छवि को देती हैं, जिन में ते बाँहु अति सोहाई लागती है। अरु श्रीकर कंजन में श्याम रंग भरी मणिन की चूरी चमकती

हैं तथा मांगलीक अंगुलिन में ललित मुंदरी वनि आई है। ललित औ वनि आई को तात्पर्य्य यह है कि अंगूठे को मुंदरी में अमोलक आरसी है औ अंगूठे की समीपिनी में श्री रघुवर को मधुर तसवोर है अरु मध्यमा की मुंदरी में निज तसवीर है। अपर रत्नों से जटित है ॥६०॥

पद्मराग कहे अरुण मणि और इन्द्रनील मणिजटित दोनों हाथों में दो-दो कंकण, जिन्हें लोक में कंगना कहते है, ते राजते हैं। सो अरुण कंगना मानो वनज को फूल है। तापर नोल कंकण मानो दुरेफ (भ्रमरों) की पंगति विराजै है। कमल कंकण की समता रंगमात्र की है, आकार की नहीं ॥६१॥

॥ मूल ॥

लहँगा कटि परदेस भाँति अति सोभित गहिरी।
अरुन असित सित पीत मध्य नाना रँग लहरी ॥६२॥

अर्थ—कटि प्रदेश कहे कटि मंडल में लहँगा गहिरी भाँति कहे गंभीर प्रकार ते घने घेर की अति शोभित है अर्थात् जाको गहिरी भाँति में मन की वृत्ति डूब जाती है। आगे नहीं जाती। ताके मध्य में अरुण (लाल) असित (नील), सित, (श्वेत), पीत अरु नाना रंग कहे हरी, गुलाबो, वैगनी आदि की लहरी (धारी) अरु धारीन के वीच-वीच जरतारिन की बेलि बनो है ॥६२॥

॥ मूल ॥

हरित नगन कर जरित युगल जेहरि अस राजै।
तिन पर घुंघरू और अग्र बिछिया सु विराजै ॥६३।

अर्थ—हरित नगन करके जटित कंचन की युगल जेहरी युगल पदन में अतिशय राजती है। तिनके तरे घुंघरू अरु अग्र में अर्थात अंगूठन अँगुलिन में छबीली विछिया सुविशेष राजती है ॥६३॥

॥ मूल ॥

तिन पर नग जु अमोल ललित चूनी गन लाये।
चरन चारु तल अरुन सहज ही लगत सुहाये ॥ ६४ ॥

अर्थ—तिन बिछियान के ऊपर बीच में एक-एक अमोलक नग लाये (जड़े) हैं। तिनके चारों तरफ ललित चुन्नी गण वहुत रंग के मणि की कणी समूह जड़ी है। अरु चरण चारु (सुन्दर) हैं। अर्थात् अड़तालिस चिह्नन ते चिह्नित है। ते चिह्न प्रथम श्री रामपद चिह्नन के संग ही वर्णन ह्वै गये हैं। अरु तल (तरवा) अति अरुण हैं। सहज ही अर्थात् बिना महावर दिये ही सुठि सुहाये लागते हैं ॥६४॥

॥ कवित्त ॥

जोहिये न जावक जपा वँधूक विद्रुम में,
रजोगुण नवल रसाल द्रुम दल मैं ।
किंसुक सुमन में न वीरवधू तन में,
न वंदन कुसुंभ हूँ गुलाव गिरा जल मैं ।
विंवहूँ के फर में न वाल दिवाकर में,
न रति के अधर में न मंजुल कमल में ।
ऐसी कोमलताई औ ललाई न सुहाई कहूँ,
जैसी 'रसरंग मनी' सीय पदतल मैं ।

॥ नखशिख उपसंहार ॥

इस प्रकार श्री स्वामी अग्रदेव जो प्रथम दो पद ते वन्दना करि, अट्ठाइस पद्र ते श्री अवध धाम सिंहासनादि को ध्यान अट्ठाइसौ नरक को यातना निवारण को उपाय कहे ।

पुनि तोस अंक ते छियालिस ताईं षोडश पद ते षोडशोपचार सम श्री राम ध्यान कहे ।

पुनि एक पद में अवस्था औ अमित तेज प्रकाश की एकरसता कहे । अरु एक ही पद में युगल रूप की सच्चिदानन्द औ संयोग कहि कै सोरहै पद ते श्री स्वामिनी ध्यान सम्पूर्ण किये । यामें युगलपरत्व औ निज प्रीति की समता जनायै ।

अब दो पद ते उभय प्रभुन को प्रभाव अरु चार पद ते अंग ध्यान कहते हैं ।

॥ मूल ॥

अतुलित युगल स्वरूप कवन अस उपमा तिनकी ।
जेतिक उपमा दीप्ति शक्ति करि भासित तिनकी ॥६५॥

अर्थ—जगत में जेतिक उपमा है, ते जिनको दीप्ति शक्ति करिकै भासित है, तिन की कवन अस उपमा है कि जो दीजिये अर्थात् कोई नहीं है । ताते युगल स्वरूप श्री सीतारामजी अतुलित (तुल्यता रहित) निरुपम है ॥६५॥

॥ मूल ॥

यहि विधि राजत राम अवधपुर अवध विहारी ।
दंपति परम उदार सुजस सेवक सुखकारी ॥६६॥

॥ यथा पद ॥

राम से राम सीता सी सीता ।
शिव विरंचि शारदा शेष शुक पटतर खोजत कवि अघाता ॥

सुन्दर शील सुहाग अमित गुण अखिल लोक नर नारी जीता ।
अग्रस्वामि स्वामिनी उजागर नेति नेति श्रुति गावत गीता ।।

६६ वें छन्द का अर्थ—यहि विधि जेहि विधि पूर्व ही कहि आये तेहि विधि नित्य श्री अवधपुर में अखंड अवध विहारी श्री राम सीतारमण राजते हैं ।

कैसे हैं कि दम्पति नाम जायापति रूप हैं अर्थात् एक ही परमात्मा अवधपुर विहार हेतु दम्पति विग्रह ते विराजते हैं । पुनि कैसे हैं कि परम उदार हैं अर्थात् श्री महाराज मिथिलेश जू को वात्सल्य रस सुख सम्पत्ति दिये अरु श्री अवध मिथिला वासिन को वाल विवाहादिक लीला सुख सम्पत्ति दिये तथा सुग्रीव विभीषणादि को लोक में राज्य, परलोक में अभयपद दिये । ऐसे ही श्री अवध निवासी चारों वर्ण पशु पिपीलिकादिकों को परम-पद दिये । ऐसे दम्पति श्री सीताराम परम उदार हैं । अरु अजहूँ यहि विधि परम उदा-रतादि संयुत सुयश करिकै सेवकों को सुखकारी हैं । अर्थात् जो जो सुख त्रेता में स्वयं स्वरूप ते दिये, सोई सोई सुख सेवकों को केवल सुयश श्रवण मनन मात्र ते देनहारे परम उदार दम्पति हैं ।

पुनि दूसरा अर्थ । यहि विधि राजत श्री राम अवधपुर अवध विहारी ।" दंपति जिनको सुयश परम उदार है अर्थात् शतकोटि रामसुयश है सो अपने एक एक अक्षर के उच्चारण ते महापातक ब्रह्महत्यादि तथा जन्म मरण को नाश करि कै परमपद देने हारो है । प्रमाणश्लोक "चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ।।"

अरु परम उदार सुयश सेवकों को सुखकारी है अर्थात् जैसे श्री सीताराम जी त्रेता में सुखकारी हैं, तैसे सुयश सुखकारी है ।।६६।।

।। मूल ।।

दक्षिण भुज रिपुदलन गौर तन तेज उदारा ।
उभय हेतु अनुसार धरे वृत खंडित धारा ।।६७।।
शेष लिये कर छत्र भरत लिये चौर ढुरावैं ।
अनिल सुवन कर जोरि सुप्रभु की कीरति गावैं ।।६८।।

अर्थ—यहि प्रकार प्रधान अंगी ध्यान कहि कै अब तदंग रूप परिवार ध्यान कहते हैं । श्री रिपुदलन जी गौर तन अखंडित धारा उदार तेज युक्त अरु उभय प्रभु श्री सीताराम जी के हेतु कहे सनेह रुचि के अनुसार वृत्त कहें तालवृंत अर्थात् पंखा दक्षिण भुज में धरे उभय प्रभुन के समीप वामदिशि विराजते हैं । इहाँ वृत शब्द तालवृंत के बोध जैसे उपवीत मात्र से यज्ञोपवीत को बोध होता है, तैसे जानना । यथा—"सीसनि टेपारे उपवीत पीत पट कटि ।" श्री गीतावली ।।६७।।

अ   शेष नाम अखिलेश्वर शेषी परब्रह्म श्री रामांश शेषत्व श्री रघुकुल ललाम

ललित लक्षण धाम दिव्य गुणागार श्री लक्ष्मण कुमार अत्रि कुमार (चन्द्र) मंडलाकार छत्र लिये छवि छावै है।

तैसही रामानुराग भाग भाजन भक्ताधिराज युवराज श्री रघुवंश विभूषण भरतजी चारु चौंर ढुरावै है। अरु अनिल सुवन (श्री हनुमान जी) युगल कर कमल जोरि कै सुप्रभु की कीरति गावते हैं। यथा विनयपत्रिकायाम् पद—

महानाटक निपुण कोटि कविकुल तिलक गान गुन गर्व गन्धर्व जेता।

पुनः

जयति सिंहासनासीन सीतारमण निरखि निर्भर हर्ष नृत्यकारी॥६८॥

॥ मूल ॥

अपनी अपनी ठौर नित्य परिकर बनि भारी।
सुरति शक्ति विमलादि रहत नित आज्ञाकारी॥६९॥

श्री सीताराम भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न हनुमान ये मन्त्रराज के पट अक्षर समान हैं। इनका ध्यान करिकै अब परिवार ध्यान कहते हैं। आपनी आपनी ठौर में नित्य सच्चिदानन्द रूप अवध मिथिलाभिमान भावनाधारी भारी परिकर सखा, सखी, दास, दासी गणों की मण्डली बनी है। निज निज ठौर सेवा लिये सोहती है। अपनी अपनी ठौर यह पद पूर्व पर बोधक है। पूर्व मैं श्री भरतजी दाहिने, श्री शत्रुहन जी बायें, श्री लखन पीछे, श्री हनुमान जी आगे, औ पर मैं—सुरति विमलादि श्री सीतारामजी की शक्ति रूपा सखी युगल की आज्ञाकारी नित्य निकट रहती हैं। सुरति नाम श्री सीतारामजी को पराप्रीति रूपा सखी। अथवा सुन्दर रति प्रीतियुक्त विमलादि सखी श्री रामतापनी यंत्र में पूजित हैं।

तिन के नाम—विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी अर्थात् नम्रा, सत्या, ईशाना, अनुग्रहा—इति तैसहीं श्रीचारुशीला, श्रीचन्द्रकला, सुभगा, रूपकला, हेमा, क्षेमा, वाग्मी इत्यादि सब सखी रहस्य ग्रंथों में विदित हैं॥६९॥

॥ मूल ॥

जो जो जेहि अधिकार सचिव सेवा मन बासै।
बीनाधर सुर तान गान करि प्रभुहि उपासै॥ ७०॥

सखीन को सूचित कर अब सखादासों को कहते हैं। जो जो सचिव जेहि सेवा अधिकार पाये हैं तेहि सेवा विषे मन को वासै है।

सेवा के नाम—छत्र, चामर, व्यजन, दर्पण, आयुध, ताम्बूल, पुष्पमाला, जलपान इत्यादि ऋतु रुचि समा समय अनुकूल अमित सेवा हैं। सो जो जेहि सेवा को अभिलाषी है, सोई अधिकार पाय ताही सेवा सुख में मन को वासे है, नाम सुगन्धित करै हैं। दूसरी वासना नहीं करै। तथा और सेवान को निर्देश देखाउते हैं। कोई वीणा आदि बाजान को धारण करि स्वर सुधारि, तान लैकै युगल यश गान करिकै, उभय प्रभुन को उपासते हैं, नाम सेवन करते हैं।

सचिवन के नाम श्री अग्रस्वामी जी के अष्टयाम में हैं :—सुलोचन, सुभद्र, सुचन्द्र, जयसेन वरिष्ठ, शुभशील, अनंगजित, रसकेतु। ये सुमन्त्रादि आठौ मंत्रिन के पुत्र हैं। तैसही सखा श्री चारुशीलमणि, श्रीवीरमणिजी, श्रीधीरमणिजी, हितमणिजी, रसराम-मणिजी इत्यादि सखा अरु मधुर दास अनेक हैं ॥७०॥

॥ मूल ॥

यही ध्यान उर धरै स्वयं तन सुफल करेवा।
भव चतुरानन आदि चरन बंदै सब देवा ॥७१॥

अर्थ—यहि प्रकार सपरिवार ध्यान वर्णन करिकै, अब पांच पद ते ध्यान फल स्तुति कहि, पुनि पांच पद ते नीचानुसन्धान कहते ग्रंथ पूर्ण करेंगे।

जो यहि ध्यान उर नाम हृदय कमल मे धरै, आन नहीं, तो वा जन स्वयं तन कहे आपने तन को आप ही सुफल करै अर्थात् अन्तर्यामी ब्रह्म सहित जीव रूप बीज है। ताते तन वृक्ष भयो। ताको फल यही सांग श्री सीतारामजी को ध्यान है।

जो कोई कहै कि यही ध्यान क्यों धरै? तापर कहते हैं कि भव (महादेव) चतुरानन (ब्रह्मा) आदि सब देवता यही श्री सीताराम को ध्यान धरि इनहीं के चरण वन्दते हैं। अरु जो यह ध्यान धरै ताहू को वन्दे हैं। ताते यही ध्यान धरै ॥ ७१ ॥

॥ मूल ॥

यह दम्पति वर ध्यान रसिक जन नित प्रति ध्यावै।
रसिक बिना यह ध्यान और सपनेहु नहिं पावै ॥७२॥

अर्थ—शिवादिक को साक्षी दै कै अब रसिक संतन की साक्षी देते हैं।

यह दिव्य दम्पति को वर नाम सब ध्यानन में श्रेष्ठ अर्थात् ऐश्वर्य अरु राजमाधुरी मिलित, तथा श्रुतिशास्त्रसम्मत, रसिकसंतभावना भूषित, सपरिवार श्री सीताराम जी को ध्यान, रसिक जन नित्य प्रति ध्यावै हैं। अरु रसिक सनेही बिना, यह ब्रह्मरस रूप ध्यान और रूखे लोग स्वप्नेहु में नहीं पावते ॥७२॥

॥ मूल ॥

अमल अमृत रस धार रसिक जन यहि रस पागै।
तिहि को नीरस ज्ञान जोग तप छोई लागै ॥७३॥

अर्थ—अमल कहे मायिक मल रहित अमृत रस को धारण धारा यह ध्यान है। अर्थात् दम्पति रूप अमल अमृत रसमय अथाह कुण्ड है। अरु महामधुर मुसक्यानि सरस कृपा कलित बोलनि विलोकनि आदि अमल अमृत रस धारा के रस ते पागै है। अर्थात् अन्तःकरण ध्यानमय करै है। तेहि को ज्ञान आत्मा परमात्मा को एक मानना, योग निर्बीज शून्य समाधि, तप स्वर्ग सुख हेतु काय क्लेश—ये तीनों नीरस नाम श्री राम भजन प्रेम रस हीन ऊख की छोई सम लागते हैं। यामे यह व्यंजित है कि श्री राम भजन रस रहित जिनको ज्ञान योग तप प्रिय लागै हैं ते ऊख की छोई खाने वाले पशु हैं। यथा—दोहा—

"रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्वान।
ज्ञानवंत अपि सो नर, पसु बिन पूछ विषान ॥७३॥

॥ मूल ॥

परम सार यह चरित सुनत श्रवनन अघ हारी।
ध्यान परम कल्यान सन्त जन आनँदकारी ॥७४॥

अर्थ—यह ध्यान वर्णन रूप चरित परम पवित्रता को सार है। श्रवणन में सुनत संते, सब पाप हरनहारो है। अरु ध्यान करत संते तो परम कल्याण नाम सरस मुक्तिकारी, अरु संत जनन को श्रवण ध्यान दोनो परमानन्दकारी है ॥७४॥

॥ मूल ॥

तिन्हैं भूलि जन कहौ कुटिलता पंक मलिन मन।
यह उज्जल मनि माल पहिरिहैं परम रसिक जन ॥७५॥

अर्थ—श्री अग्रस्वामी अपने अनुगामिन को शिक्षा देते हैं कि कुटिलता रूपी पंक (कीच) ते जिनके मन मलिन हैं, तिन्हैं भूलि कै भी न कहो। यह ध्यानमञ्जरी उनको प्रिय न लागैगी; क्योंकि यह ध्यानमञ्जरी उज्ज्वल (स्वच्छ) मणि की माला है। ताते मलिन मन वारे याके अधिकारी नहीं हैं। याके अधिकारी परम रसिक जन अर्थात् स्वच्छ श्री सीतारामोपासक हैं। तिन्हैं पहिरावना नाम सुनावना। ते आपनी सुमति रूपी ग्रीवा में पहिरैंगे नाम धारण करैंगे ॥७५॥

॥ मूल ॥

जगत ईश को रूप वरनि कहि कवन अधिक मति।
कहा अलप खद्योत भानु के निकट करै द्युति ॥७६॥

अर्थ—अब कार्पण्यता कहते हैं। जगत ईश श्री सीताराम जी को रूप मन वाणी के परे है। ताको वाणी ते वरणि कै कहै ऐसो जगत में कौन अधिक मतिमान है। तापर दृष्टान्त देते हैं कि कहाँ सूर्य्य सम जगत ईश को रूप अरु खद्योत (जुगनू) सम जीव की मति ! सो जैसे अति अल्प जुगनू भानु के निकट नहीं दुति करै; तैसे जीव की मति जगदीश के रूप को नहीं वरनि सकै ॥७६॥

॥ मूल ॥

कहँ चातक की शक्ति अखिल जल चोंच समावै।
कछुक बुन्द मुख परै ताहि लै आनन्द पावै ॥७७॥

अर्थ—जगत ईश को रूप ध्यान वर्णन में नहीं आवै, तब क्यों वरणते हैं ? तापर कहते हैं कि चातक (पपीहा) की ऐसी शक्ति कहाँ है कि जितना स्वाती को मेघ वरपै, तितना सब जल चोंच में समाय जाय; परन्तु जो कछुक बुन्द मुख में परै है, ताही को लै कै आनन्द पावत है। तैसेही जीव की शक्ति नहीं है कि सब शोभा मति में समाय जाय; परन्तु जो कछु छवि की छीट आभास मति में आय जाय है, ताही में आनन्द पाय कै कृतकृत्य होय है ॥७७॥

॥ मूल ॥

सुनि आगम विधि अर्थ कछुक जो मनहि सुहायो ।
यह मंगलकर ध्यान जथा मति वरनि सुनायो ॥७८॥

अर्थ—आगम नाम तंत्रसंहिता अर्थात् सुन्दरीतंत्र श्री अगस्त्यसंहितादि तिन में जो ध्यान की विधि है, सो श्री गुरु संतन ते सुनि कै, तिन आगम ग्रन्थन को अर्थ जो कुछ सुहायो नाम प्रिय लाग्यो अर्थात् शास्त्र रीति श्री गुरु वाक्य निज निश्चय मिलाय कै, यह मंगल मूल को ध्यान जनन को मंगल करनहारो यथा मति अपनी मति के अनुसार वरनि कं ध्यानाभिलाषी जनौं को सुनायो है ॥७८॥

॥ मूल ॥

श्री गुरु सन्त अनुग्रह ते अस गोपुर वासी ।
रसिक जनन हित करन रहसि यह ताहि प्रकासी ॥७९॥

अर्थ—किसने वरनि सुनायो है ? सो श्री कवि कृपानिधि जी साक्षी रीति ते निज भावना रूप अरु शरीर को नाम जनावते हैं । श्री गुरु सन्तन की अनुग्रह तें अस गोपुर वासी, अस कस ? कि जस पूर्वं कहि आये हैं तस ।

"अवधपुरी निज धाम परम अति सुन्दर राजै" इत्यादि अर्थात् नित्य भावना रूप दिव्य अवध में श्री सीताराम जी के मुख्य महल का गोपुर नाम खास ड्योढ़ी दरवाजा को वासो कैसे कै भयो कि श्री गुरु संत अनुग्रह ते, सो यह रहस्य (गुप्त) महा माधुरी मय नित्य अवध भावना ध्यान रसिक जनन के भावना करन हित ताही गोपुर वासी ने प्रकासी नाम प्रगट वर्णन कियो है ॥७९॥

॥ मूल ॥

ध्यानमञ्जरी नाम सुनत मन मोद बढ़ावे ।
श्री रघुवर को दास मुदित मन अग्र सो गावै ॥८०॥

इति श्रीस्वामीरामानन्दश्रीअनन्तानन्दपदाश्रित–
पयोहारी श्रीकृष्णदासचरणानुग
श्री अग्रदासविरचिता
श्री सीताराम ध्यानमंजरी संपूर्ण
॥ श्री सीतारामार्पणमस्तु श्रीः ॥

अर्थ—यह रहस्य को नाम श्री सीतारामध्यानमंजरी है। सुनत संते मन में मोद बढ़ावनेहारी है । तब ध्यान धरत संतें क्या कहना है ?

श्री कहे श्री जानकी जी सहित जे रघुवर तिनको दास मुदित मन जो अग्र सो गावै । तात्पर्य्य यह कि जो श्री रघुवर को दास होयगो; ताको श्री रघुवर अवश्य मुदित करैंगे । यथा श्री गोस्वामी जी—

पुनः तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है ॥
"भाग तुलसी की भले साहब को जन भो ।"—इत्यादि श्री गीतावली ।

अरु दास कहने का हेतु यह है कि जीवात्मा सब परमात्मा श्री रघुवर के नित्य दास हैं। यथा श्लोक :—

"दासभूता सु तः सर्वे ह्यात्मानो परमात्मनः।
नान्यथा लक्षणं येषां बंधे मुक्ति हि सर्वदा॥"

अरु दासधर्म सेवा कैंकर्य्य है, सोई जीवन को जीवन आधार है, भावना प्रत्यक्ष दोनों दशा में।

॥ हरिः ॐ तत्सत्, श्रीमते रामचन्द्राय नमः॥

टीकाकारकृत ॥ दोहा ॥

बन्दौं श्री सरयू अवध, सिय रघुवर हनुमन्त।
भरत लषन रिपुदमनपद, श्री गुरु धनु शर सन्त॥
कृत मकरन्द सुमाधुरी, टीका मणि रस राम।
कहहिं सुनहिं तिन हित करैं, जय श्री सीताराम॥

छन्द बरवै (टीकाकारकृत)

शत उनीस पुनि पचपन संवत माहिं।
माधव सित भृगु जानकि नवमी काहिं॥१॥
सीताराम शरण जन मणि रस राम।
टीका रचि तट सरयू अवध सुधाम॥२॥
अग्रस्वामि पद - बंदै माँगे येहु।
हिये ध्यान सिय रघुवर नाम सनेहु॥३॥

कवित्त (टीकाकारकृत)

जुगल किशोर गौर श्यामल सनेह सने
ललित सुबाहुँ कल कंठन कसे रहैं।
केलि के उछाह छवि छाके दोउ दोहुँन के
लूटत अनन्द लीला लोभित लसे रहैं॥
फेरत विलोचन विलोल त्यों विनोद माते
राते रस रंग तन हेरत हँसे रहैं।
सिया रघुनन्दन अनन्दकन्द युगचन्द
ऐसेहि हमारे हिय वियत[१] बसे रहैं।

इति श्रीरामानन्दीयश्रीराघवेन्द्रसुहृत् श्रीकामदेन्द्रमणिशिष्येण
श्री सीतारामशरणरसराममणिनांकृता
श्री सीतारामध्यानमंजरी मकरन्दमाधुरी टीका संपूर्णा
॥ श्रीसीतारामार्पणमस्तु॥ श्री गुरुभ्यो नमः॥

([१]वियत—आकाश, हृदयाकाश में युगलचन्द)

।। परिशिष्ट भाग ।।

श्री धनुर्वाणपरत्वपरिचायक

।। कवित्त ।।

राजै रघुनाथ वामहाथ रसरंगमनो
दिव्य काम चाप ते सुचारु चित्रकारी को।
सुने जासु रोंदा को कठोर घोर सोर कंपै,
अरि जैसे करि सुनि नाद कुंजरारी को ।।
संत सुरपाल वंक वालक मयंक गति,
लंकपति काल अभयदायक दुखारी को।
धरनी धरम धेनु द्विज रखवार भारी,
वन्दौं आयुधाधिप धनुष धनुधारी को ।।
महावायु वसत हमेस जुग पंखन पै,
छूःत में छोभैं सातो सिन्धु त्यौं जहान हैं।
फर पै विराजै भानु पावक महान दोऊ,
गुरुता गजत मेरु मंदर समान है ।।
सूच्छम अकास ज्यौं प्रकासैं रसरंग मर्णी,
एक ते अमोघ होत रूप वेप्रमान है।
कुलिस ते कोटि गुने शूल ते सहस्र गुने,
चक्र ते चालीस गुने चोखे रामावन हैं ।।

देखत अवध को आनन्द।
हरषि वरषत सुमन निसि दिन देवतनि को वृंद ।।
नगर-रचना सिखन को विधि तकत बहु विधिवन्द।
निपट लागत अगम ज्यों जलचरहि गमन सुछंद ।।
मुदित पुरलोगनि सराहत निरखि सुखमाकंद।
जिनके सुअलि-चख पियत राम-मुखारविन्द मरंद ।।
मध्य - व्योम विलंवि चलत दिनेश-उडुगन-चंद।
रामपुरी विलोकि 'तुलसी' मिटत सब दुख-द्वंद ।।

एक भरोसो एक बल एक आस .विश्वास।
एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास॥
एक भरोसो रामबल रामनाम विश्वास।
सुमिरि नाम मंगल कुसल, माँगत तुलसीदास॥
तबलगि कुसल न जीव कहँ सपनेहूँ मन विश्राम।
जब लगि भजत न रामपद सोकधाम तजि काम॥
रसना सांपिनि वदल विल, जो न जपहि हरिनाम।
तुलसी प्रेम न राम सो, ताहि विधाता वाम॥
हिय फ़ाटहु फूटहु नयन, जरहु ते तन केहि काम।
द्रवहि स्रवहिं पुलकहिं नहीं तुलसी सुमिरत राम॥